# आधुनिक टर्की

लेखक

अतहरअली बी० ए०

---

सम्पादक

इहतरामुद्दीन क़िदवाई एम्० ए०, एल्० टी०
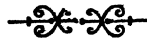
मुद्रक व प्रकाशक

श्रीबिपिनबिहारी कपूर

नवलकिशोर-प्रेस, लखनऊ.

१९४७ ].                [ मूल्य १॥=)

# विषय-सूची

# अध्याय १

## देश

ऐतिहासिक संसार में टर्की का स्थान एक चौराहे के समान है। प्राचीन काल से एशिया माइनर या अनातोलिया और बल्कान का पूर्वी भाग अर्थात् पूर्वी थ्रेस या योरपियन टर्की—योरप और पूर्वी देशों के बीच एक पुल का काम देता रहा। इस पुल के उस पार मध्यपूर्व के रेगिस्तानी प्रान्त हैं और इस पार पूर्वी जातियाँ—जैसे सलजूक़, तुर्क, तातार और उस्मानी—बसी हुई हैं। जब कभी पश्चिम में सैनिक और राजनैतिक शक्तियाँ बलहीन हो गईं तब इन जातियों को बाढ़ के समान उमड़ने का अवसर मिला। एशिया माइनर के इतिहास में उथल-पुथल होने का यही कारण है कि वह दो विभिन्न सभ्यताओं के मध्य में स्थित है। परन्तु बीसवीं शताब्दी में टर्की ने पाश्चात्य सभ्यता अपनाकर प्राचीन सांस्कृतिक सीमा को मिटा दिया।

उत्तर और दक्षिण में भी टर्की का भौगोलिक महत्त्व ऐसा है कि उसे समय-समय पर राजनैतिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। योरपियन रूस के उस बड़े क्षेत्र के लिए,

जो समुद्र-तट के पीछे स्थित है, केवल एक ही ऐसा जल-मार्ग है जिसमें जाड़े में बर्फ़ नहीं जमती और जिसमें होकर उसके जहाज़ खुले समुद्रों तक पहुँच सकते हैं। यह मार्ग बासफ़ोरस जलसंयोजक के नाम से विख्यात है और काले सागर को एजियन सागर से मिलाता है। १९वीं शताब्दी अर्थात् रूसी साम्राज्य की उन्नति और उसके दक्षिण की ओर फैलने के काल में काले सागर और बल्कान प्रायद्वीप में रूस की नीति का मुख्य लक्ष्य इस जलसंयोजक पर अधिकार करना या उस पर अपना प्रभाव स्थापित करना था। एक ओर रूस की इस हार्दिक इच्छा ने और दूसरी ओर योरप की शक्तियों की इस अभिलाषा ने कि रूस अपने उद्देश्य में सफल न हो सके—१९वीं शताब्दी के अन्त में "पूर्वी समस्या" की नींव डाली।

टर्की के इतिहास में गत शताब्दी के समान ये उलझी हुई समस्याएँ अब भी वर्तमान हैं। कुछ ही वर्ष हुए कि पश्चिम—हिटलर के साम्राज्य के रूप में—टर्की की सीमा पर थ्रेस में दबाव डालता हुआ दृष्टिगोचर हो रहा था। सन् १९४१ की वसन्तऋतु में इराक़ियों का विप्लव और जर्मनों के स्याम-देश के हवाई अड्डों का प्रयोग करने से यह अनुभव होने लगा था कि कदाचित् अब पश्चिमी बाढ़ बग़दाद ही पहुँचकर रुकेगी। परन्तु रूस पर आक्रमण कर देने से धीरे-धीरे जर्मनी की शक्ति काले सागर के तट की ओर एकत्र होने लगी। इस

प्रकार टर्की के लिए काकेशश पहाड़ की ओर से एक नया भय उपस्थित हो गया। इस भय के कारण टर्की और सोवियट रूस के पारस्परिक सम्बन्ध में एक विशेष परिवर्तन हो गया। सन् १६३६—४१ के मध्य जब रूस जर्मनी के आक्रमण से बचने के लिए अपने रक्षा-स्थानों के प्रसार में लगा हुआ था तब तुर्कों को यह भय हुआ कि कहीं दर्रे दानियाल की प्राचीन समस्या फिर न खड़ी हो जाय। परन्तु कुछ दिनों पश्चात् रूस और जर्मनी के युद्ध की गति से यह भय बिलकुल जाता रहा था।

आक्रमणकारियों ने टर्की पर केवल अधिकार जमाने के अभिप्राय से कभी आक्रमण नहीं किया; क्योंकि यह देश अधिक उपजाऊ नहीं है, बल्कि इससे उनका हमेशा यह अभिप्राय रहा कि वे दर्रे दानियाल पर अधिकार करके पूर्वी और पश्चिमी देशों की ओर स्वतन्त्रतापूर्वक बढ़ सकें। टर्की का कुल क्षेत्रफल २,६६,३५६ वर्गमील है, जो न तो अधिक उपजाऊ है और न घना बसा हुआ है। देश का भीतरी भाग मध्य-एशिया के घास के मैदानों से मिलता-जुलता है। यह प्रदेश ऊँचाई पर स्थित होने के अतिरिक्त यथेष्ट विस्तृत और उजाड़ भी है। वहाँ जाड़ों में बर्फ़ जमी रहती है और गर्मियों में कठिन धूप पड़ती है। यदि आप समुद्री तट से टर्की की राजधानी अंकारा की ओर जायँ तो आपको घास से ढके हुए बहुत से पठार मिलेंगे जिनको

झुलसी हुई भूरे रंग की पहाड़ियाँ एक दूसरे से अलग करती हैं। यहाँ की पहाड़ियों और घास के मैदानों में बहुत कम वृक्ष हैं, केवल कहीं-कहीं काँटेदार झाड़ियाँ और पेड़-पौधे दिखाई देते हैं। टर्की में जितना ही आप पूर्व की ओर बढ़ते जायँगे, भूमि अधिक बंजर, पहाड़ अधिक ऊँचे और ग्राम बहुत ही अव्यवस्थित मिलेंगे।

केवल उत्तर में, काले सागर-तट के समीप, जंगल दिखाई देते हैं। यथार्थ में वृक्षों की कमी के कारण ही अनातोलिया के भीतरी भाग का जलवायु इतना शुष्क है। उस्मानी तुर्क लड़ाकू थे और उन्हें वृक्ष लगाने का अधिक चाव न था। वे जलवायु और खेतीबारी का विचार किये विना वृक्षों को काट डालते थे। अडाना के प्रान्त में सन् १९१४ तक युद्ध-सामग्री के लिए अन्धाधुन्ध वृक्ष काटे गये। यदि शीत-ऋतु में बर्फ़ न गिरती तो अनातोलिया की ऊँची भूमि न जाने कब की रेगिस्तान बन चुकी होती। फिर भी आजकल यहाँ मोटा अन्न यथेष्ट मात्रा में पैदा होता है और चरागाहों में मोहियर नस्ल की बकरियाँ—जिनका ऊन काफ़ी लम्बा और कोमल होता है—चराई जाती हैं।

यदि आप टर्की के मानचित्र पर दृष्टि डालें तो आपको आड़ी-तिरछी बहती हुई नदियों का एक जाल-सा बिछा हुआ दिखाई देगा। ये नदियाँ अधिकांश मध्य के पहाड़ों से निकली हैं। इनको देखने से यह ज्ञात होता है कि इनमें जल

प्रचुर मात्रा में है जिससे देश के एक बड़े भाग की सिंचाई हो सकती है। परन्तु ग्रीष्मऋतु में यदि आप मोटर में बैठकर अज़मीर ( स्मर्ना ) से अंकारा की यात्रा करें तो आपको एक भी नदी न दिखाई देगी, यद्यपि कहीं-कहीं पत्थर के पक्के पुल और उनमें थोड़े से पानी के साथ बहते हुए कंकर-पत्थर ज़रूर दिखाई देंगे। वसन्तऋतु में यहाँ नदियाँ बरसाती पानी से उमड़ आती हैं। अंकारा को देखने से ज्ञात होता है कि वृक्ष लगाने और सिंचाई करने से देश को किस प्रकार हरा-भरा और उपजाऊ बनाया जा सकता है। अंकारा में पानी की अब भी कमी है; क्योंकि नगर के चारों ओर उजाड़ पहाड़ियाँ वर्तमान हैं जो दोपहर में सूर्य की गर्मी से तपने लगती हैं और सूर्यास्त के बाद एकदम ठंडी हो जाती हैं। फिर भी इस बात को मानना ही पड़ता है कि अंकारा और उसके आसपास की दो-तीन घाटियाँ यथेष्ट हरी-भरी हो चुकी हैं। इस नये नगर की सड़कों पर दोनों ओर बबूल के वृक्ष लगे हुए हैं और सड़कों के समीप बहुत से बाग़ और बग़ीचे भी दिखाई देते हैं। क्यूबेक बाँध के समीप—जो टर्की की सिंचाई की योजना का पहला काम है—पानी के बड़े-बड़े हौज़ बनाये गये हैं। इन हौज़ों के चारों ओर सुहावने बाग़ और वाटिकाएँ हैं जहाँ अंकारा के निवासी सन्ध्यासमय सैर और मनोरंजन कर सकते हैं। यदि आप वायुयान द्वारा अंकारा

के दृश्य देखें तो आपको उसके परिवर्तन पर आश्चर्य होगा। इस्तमबोल से चलकर जब वायुयान अंकारा के हवाई अड्डे की ओर आता है तब अगणित भूरी पहाड़ियों को पार करने के बाद एकाएक हरी-भरी भूमि सम्मुख आ जाती है। तुर्क इस बात को मानते हैं कि इस परिवर्तन से अंकारा का जलवायु उत्तम हो गया है।

केवल समुद्रों के तट के समीप जलवायु सम और विभिन्न प्रकार का है। काले सागर का तटीय मैदान "सीमसन" को छोड़कर—जहाँ वह "क़ज़लअरमाक़" की घाटी में यथेष्ट विस्तृत है—बहुत ही सिकुड़ा हुआ है। समुद्र के समीप होने से यहाँ का जलवायु किसी अंश तक सम और भूमध्य-सागर के जलवायु से मिलता-जुलता है। सीमसन से आगे एक ऐसा भाग भी है जहाँ नारंगियाँ ख़ूब पैदा होती हैं। काले सागर में बहुधा बड़े-बड़े तूफ़ान आते हैं। यही कारण है कि ज़नगलडाक़, सीमसन और तराबज़न के बन्दरगाह जहाज़ों के आने-जाने के लिए अधिक उपयोगी नहीं हैं। सच तो यह है कि सारा काला सागर ही जहाज़ों के आने-जाने के लिए भयंकर समझा जाता है।

इस्तमबोल के जलवायु पर काले सागर का बहुत प्रभाव पड़ता है। उत्तर की शीतवायु बासफ़ोरस तक आती है और वायु की गति बदल जाने पर जब दक्षिण की उष्ण वायु उससे मिलती है तब कोहरा पड़ने लगता है। जाड़े के

दिनों में थोड़ी सी वर्षा, बर्फ़ का गिरना और कोहरे की भरमार रहती है। गर्मियों में वातावरण इतना गर्म हो जाता है कि यहाँ के साधारण दिन भी दक्षिण के गर्मी के दिनों से अधिक कष्टदायक हो जाते हैं। कहा जाता है कि बासफ़ोरस की इस गर्म, तर और कष्टदायक जलवायु ने टर्की के इतिहास पर बहुत गहरा प्रभाव डाला है। बज़नतीनी साम्राज्य के पतन पर उस्मानी तुर्कों ने पूर्व की ओर से आकर इसे जीत लिया और कुस्तुन्तुनिया को अपनी राजधानी बनाया। धीरे-धीरे ये लोग यहाँ के जलवायु में रहने के अभ्यस्त हो गये। कमाल अतातुर्क ने विप्लव का झंडा ऊँचा करने के पश्चात् अनातोलिया की पहाड़ियों को अपना अड्डा बनाया और विजय प्राप्त करने के बाद टर्की के सबसे अधिक उजाड़ नगर को अपनी राजधानी बनाकर उसे एक सुन्दर नगर बना दिया। भौगोलिक, वैधानिक और ऐतिहासिक दृष्टिकोण से राजधानी को एक न एक दिन कुस्तुन्तुनिया से हटना ही था। राजधानी के इस परिवर्तन से अधिकारियों, सरकारी कर्मचारियों और राजनीतिज्ञों को यह ज्ञात हो गया कि अब उन्हें पहाड़ के कठिन जलवायु में रहकर ही नवीन टर्की की योजना को चलाना है, वास्तव में यह प्रयोग किसी अंश तक बहुत सफल रहा। परन्तु सप्ताह के अन्तिम दिन को अंकारा का प्रत्येक अधिकारी और व्यापारी इस्तमबोल जाने की इच्छा करता है और जब ग्रीष्म-ऋतु में बहुत

ही गर्मी पड़ने लगती है तब यथार्थ में इस्तमबोल ही राजधानी बन जाता है । बासफ़ोरस के समीप 'पैरा' से 'थापिया' तक राजदूतों के निवास-स्थान बने हुए हैं जहाँ बहुत से राजदूत गर्मी के दिन बिताने चले जाते हैं ।

दक्षिण में स्मर्ना के समीप टर्की का जलवायु सबसे अच्छा है । यहाँ जाड़े में अधिक सर्दी नहीं पड़ती और गर्मी की ऋतु शुष्क होते हुए भी सुखप्रद होती है । यह नगर अपने बाग़-बग़ीचों के कारण बहुत ही सुहावना लगता है । एजियन सागर का तट बहुत ही उपजाऊ और हरा-भरा है । यहाँ वृक्षों, फूलों और फलों की बहुतायत है । उत्तरी तट और भूमध्यसागर के किनारे का भाग भी यथेष्ट हरा-भरा है । उस सिकुड़े हुए तटीय मैदान का जलवायु—जो अडाना के समीप बहुत चौड़ा हो गया है—कुछ गर्म है । यहाँ विस्तृत रूप में खेती की जाती है और तम्बाकू व कपास बहुत ही पैदा होती है ।

उपर्युक्त बातों से आपको ज्ञात हो गया कि प्रकृति ने तुर्कों के लिए कोई सुन्दर और उपजाऊ देश नहीं रखा है । टर्की का अधिक भाग पठार है । इसमें घास के सूखे मैदान, बेकार नदियाँ और झुलसी हुई उजाड़ पहाड़ियाँ—जो आरमीनिया के पहाड़ों तक चली गई हैं--तो यथेष्ट हैं, परन्तु कम चौड़े तटीय मैदानों को छोड़कर और दूसरे भागों में खेती के योग्य भूमि बहुत कम है । हाँ, इसके साथ पूर्वी थ्रेस के

उपजाऊ मैदानों को सम्मिलित कर देना चाहिए, जहाँ का जलवायु बहुत मनोहर है और पैदावार भी खूब होती है। यद्यपि योरप के महाद्वीप का यह पूर्वी सिरा बहुत छोटा है, तथापि अधिक घना बसा हुआ है। इसी से इसके उपजाऊ होने का पता चलता है।

---

# अध्याय २

## निवासी

क्षेत्र को देखते हुए टर्की की जन-संख्या अब भी कम है। इस समय वहाँ की उत्पत्ति का औसत २·३ प्रतिशत है जो संसार में सबसे अधिक समझा जाता है। टर्की की जन-संख्या का औसत ५४ प्रतिवर्गमील है। ब्रिटेन का यही औसत ४६८ प्रतिवर्गमील पड़ जाता है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि टर्की का देश कम उपजाऊ है और इसका १४ प्रतिशत क्षेत्र किसी दशा में खेती के योग्य नहीं बनाया जा सकता। उदाहरणार्थ कोनिया के समीप की खारी पानी की झील तोज़गाल के चारों ओर के क्षेत्र को ले लीजिए। इसमें खेती करना असम्भव है। फिर भी वर्तमान टर्की की १,८०,०००,०० की जन-संख्या ( जैसा कि सन् १६४० ई० की जन-गणना से प्रकट होता है ) यदि दुगनी या तिगुनी भी

हो जाय तो भी रहने के स्थान की कमी नहीं हो सकती। कहा जाता है कि रोमन साम्राज्य के शान्ति-काल में एशिया माइनर की जन-संख्या अतातुर्क के समय से चौगुनी थी और यह बात विश्वसनीय भी है। टर्की में अब भी ऐसे स्थान हैं जहाँ गाँव के झोपड़ों के समीप ही ऐसे पुराने नगरों के खँडहर दिखाई देते हैं जो प्राचीन काल में बसने के बाद उजड़ गये। 'इफ़ासेस'—जो प्राचीन काल का एक रमणीक नगर और राजधानी था—इस समय उजाड़ और दयनीय दशा में दिखाई देता है। उसके बहुत से खँडहर दलदल के गर्भ में सो रहे हैं। ट्राय के समान विख्यात और मनोरम नगर के प्राचीन स्मारकों में केवल कुछ पत्थर शेष रह गये हैं। एशिया माइनर के विनाश में ताऊन, मलेरिया और युद्ध का सबसे अधिक हाथ रहा है। शताब्दियों तक यहाँ के वीर और हृष्ट-पुष्ट नवयुवक अपने विजेताओं की सेना में भर्ती होकर वियना से यमन तक के युद्धों में भाग लेते रहे, जिससे जन-संख्या घटती गई। दूसरी ओर 'करों' की भरमार ने खेती को नष्ट किया और लूटमार व जंगलों की सफ़ाई ने एक उपजाऊ देश को वर्तमान घास के मैदान के रूप में बदल दिया। इस समय तुर्क जो भी नया वृक्ष लगाते हैं, उसका यह अर्थ है कि वे शताब्दियों से होनेवाले विनाश को दूर करने का प्रयत्न कर रहे हैं। जब तक यह कार्य पूर्ण नहीं हो जाता, देश में इतनी गुंजाइश है कि उसके धनधान्य

की वृद्धि के साथ-साथ देश की बढ़ती हुई जन-संख्या भी और शीघ्र गति से बढ़ती रहे।

इतिहास का अवलोकन करने से ज्ञात होता है कि टर्की की जन-संख्या में भिन्न-भिन्न जातियाँ मिली हुई हैं। शताब्दियों तक अनातोलिया से सैकड़ों आक्रमणकारी आते रहे और विभिन्न संस्कृतियों और जातियों को अपने पीछे छोड़ते गये। टर्की के वर्तमान इतिहास से ज्ञात होता है कि अनातोलिया के मूलनिवासी तूरानी जाति के थे और पहले यूराल और अलताई पहाड़ों के मध्य के प्रदेश में रहते थे। प्राचीन स्मारकों से ज्ञात होता है कि तुर्कों की जातीय विशेषताएँ बहुत प्राचीन हैं। आमतौर पर तुर्कों का सिर बड़ा, माथा चौड़ा, रूप सुन्दर, नाक लम्बी, रंग गेहुँआ और बाल काले होते हैं। यह तो एक साधारण मापदंड है। परन्तु यदि कोई व्यक्ति टर्की जाय तो उसे विभिन्न जातियों के मनुष्य मिलेंगे और पढ़े-लिखे लोगों में यह बात विशेष रूप से पाई जायगी।

पश्चिमी विजेताओं—यूनानियों और रूमियों—के स्मारक अब भी विद्यमान हैं। पूर्वी विजेता—सलजूक़, तातार और उस्मानी—लगभग अनातोलिया के मूलनिवासियों की ही सन्तान थे, इसलिए वे उन्हीं में घुलमिल गये। इसके अतिरिक्त उस्मानी साम्राज्य की मुख्य-मुख्य संस्थाएँ, एक ओर तो ईसाइयों को तुर्कों में मिलाने का प्रयत्न करती थीं

और दूसरी ओर इन धार्मिक जातियों के व्यक्तियों को—जो एक जाति के होने के अतिरिक्त वे एक ही देश के और एक ही भाषाभाषी होते थे—स्वाधीनता दे देती थीं। दक्षिण के तुर्कों पर 'सामी' जाति का भी पर्याप्त प्रभाव पड़ा; क्योंकि प्राचीन काल के असीरिया के व्यापारियों से लेकर वर्तमान काल के यहूदियों तक ने उस्मानी राज्य-काल में यूनानियों के साथ मिलकर व्यापारिक सुविधाएँ प्राप्त कीं।

टर्की की वर्तमान जन-संख्या में ८५ प्रतिशत निवासी तुर्क जाति के हैं। यह गणना वंश से नहीं, बल्कि जाति से सम्बन्धित है। यों तो वे सब लोग—जो तुर्की भाषा बोलते और जनतन्त्र टर्की में रहते हैं—तुर्क ही कहलाते हैं, परन्तु वहाँ दो एक अल्पसंख्यक जातियाँ भी हैं जिनमें 'कुर्द' मुख्य हैं। कुर्दों की संख्या लगभग १० लाख है। यह जाति अधिकतर ईराक़ और ईरान की ओर के सीमान्त प्रदेशों में बसी हुई है। 'कुर्द' बहुत ही कट्टर मुसलमान और गृहविहीन होते हैं। टर्की राज्य को कई बार कुर्दों के विद्रोह को दबाना पड़ा। कुर्दों का प्रथम विद्रोह सन् १९२५ में और अन्तिम सन् १९३७ में हुआ। ये विद्रोह केन्द्रीय शासन और अधार्मिक शिक्षा के विरुद्ध किये गये थे। यद्यपि 'लासीनी' की सन्धि के अनुसार अल्पसंख्यकों को उनके उचित अधिकार दे दिये गये हैं, परन्तु ऐसा होते हुए भी कुर्दों के विरुद्ध कुछ कठिन कार्यवाहियाँ अब भी चल रही हैं। कुर्द जाति का प्रत्येक बालक उत्पन्न होते

ही तुर्क समझा जाने लगता है और स्कूल में उसे तुर्की भाषा सिखाई जाती है। कुछ जातियों को विभाजित करके विभिन्न प्रान्तों में बसा दिया गया है। इसके अतिरिक्त पूर्वी प्रान्तों में खेती की उन्नति का प्रयत्न भी किया जा रहा है। सन् १६३७ का विद्रोह कई महीनों तक चलता रहा, परन्तु उसके शान्त कर दिये जाने के बाद फिर अब तक और कोई विद्रोह नहीं हुआ है। टर्की के शासन ने पूर्वी प्रान्तों में एक सैनिक अड्डा बना रक्खा है, जो सीमा-प्रदेश की रक्षा करने के अतिरिक्त कुर्दों पर भी दृष्टि रखता है।

यदि १६१४ के महायुद्ध के बाद टर्की के यूनानियों और यूनान के तुर्कों की अल्प-संख्या के स्थानान्तरित करने का प्रबन्ध न किया जाता तो वर्तमान टर्की को अल्पसंख्यकों की एक विषम समस्या का सामना करना पड़ता। यूनानी अधिकतर स्मर्ना और उसके समीपवर्ती क्षेत्र में बसे हुए थे। सन् १६१६ में यूनानी शासन ने इस विचार से स्मर्ना में सेनाएँ उतार दी थीं कि इस प्रदेश को तुर्कों से छीन लिया जाय। यदि तुर्कों और यूनानियों के इस युद्ध के बाद भी यूनानी अल्पसंख्यक वहाँ रहते तो कदाचित् टर्की राज्य का यह सन्देह कि यूनान एजियन के तट पर अधिकार जमाना चाहता है, कदापि दूर न होता। केवल इतना ही नहीं, बल्कि टर्की में यूनानी अल्पसंख्यकों की व्यापारिक और सामाजिक सुविधाएँ भी कम कर दी जातीं। फल यह होता कि इन दोनों

देशों के वैदेशिक सम्बन्धों में चिरकाल के लिए कटुता आ जाती।

फिर भी तुर्क और यूनानी प्रतिनिधियों की स्पष्ट और पारस्परिक वार्ता से सन् १६२३ में यह निश्चय हुआ कि जन-संख्या को स्थानान्तरित किया जाय। तुर्कों की अपेक्षा यूनानियों की संख्या कई लाख अधिक थी, इसलिए सम्भव था कि समस्या कहीं हल न हो पाती। परन्तु घटनावश बातचीत आरम्भ होने से पहले ही लाखों यूनानी टर्की को छोड़कर यूनान भाग गये थे। फिर भी दोनों देशों के प्रतिनिधियों ने जन-संख्या और धन-सम्पत्ति के बारे में एक दूसरे की शर्तें मान लीं। यूनानी थ्रेस के मुसलमानों और इस्तमबोल के यूनानियों को नहीं रहने दिया गया और उसके बाद स्थानान्तरित करने का कार्य डा० नानसन की देखरेख में लीग के एक निष्पक्ष कमीशन के सुपुर्द कर दिया गया। इस कमीशन ने एक करोड़ बीस लाख पौंड अन्तर-राष्ट्रीय ऋण की सहायता से अपना कार्य पूर्ण किया। यद्यपि अधिकतर स्थानान्तर पहले तीन वर्ष के भीतर ही हुए, परन्तु यह कार्य सन् १६३५ से पहले समाप्त न हो सका। जो तुर्क यूनान छोड़कर टर्की आये, उनको टर्की से गये हुए यूनानियों की अपेक्षा यूनान में ड्योढ़ी भूमि और धन-सम्पत्ति छोड़नी पड़ी। फिर जब ये तुर्क स्मर्ना के समीपवर्ती नगरों में आये तब उन्होंने इन स्थानों को सैनिक प्रभाव से परिपूर्ण

पाया। परन्तु ऐसा होते हुए भी, इस प्रान्त में दरिद्रता को आश्रय न मिला और बाक़ी देश पर तो इसका बिलकुल प्रभाव नहीं पड़ा। इस स्थानान्तर से टर्की और यूनान के पारस्परिक सम्बन्ध पर कितना अच्छा प्रभाव पड़ा, यह केवल इससे स्पष्ट हो जाता है कि सन् १९१४ के महायुद्ध के बाद से अब तक टर्की और यूनान की मैत्री में अणुमात्र भी परिवर्तन नहीं हुआ है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि जब कभी और जहाँ कहीं इस प्रकार जन-संख्या को स्थानान्तरित किया जायगा तो डा० नानसन का उदाहरण अवश्य सम्मुख रख लिया जायगा जिससे यह कठिन कार्य उत्तम और सुगमता से पूरा किया जा सके।

---

# अध्याय ३

## उस्मानी शासन

तुर्कों की जातीय विशेषताओं पर नस्ली बनावट की अपेक्षा देश के इतिहास का अधिक प्रभाव पड़ा है। इसका यह कारण है कि वे सैकड़ों वर्ष विदेशी सेनाओं और विदेशी सभ्यता के प्रभाव में आने के लिए विवश थे और बहुत से ऐसे भी अवसर आये जब उन्हें शत्रु से अपना देश वापस लेना पड़ा। सातवीं शताब्दी तक अनातोलिया में, जो

'बज़नतीनी' राज्य का यूनानी रंग में रँगा हुआ एक प्रान्त था, पाश्चात्य सभ्यता का बोलबाला रहा। यद्यपि उस समय इस राज्य का पतन आरम्भ हो गया था, परन्तु उसकी राजधानी कुस्तुन्तुनिया में अगली सात शताब्दियों तक पूर्वी आक्रमणकारी पीछे हटते रहे। अरबों ने, जिन्होंने हाल ही में इस्लामधर्म अपनाया था, ६७१ ई० में कुस्तुन्तुनिया पर आक्रमण कर दिया। उस समय ऐसा ज्ञात हो रहा था कि मानो पूर्व, जिसके हाथों से यूनानियों ने सिकन्दर महान् के समय में अनातोलिया छीना था, एक बार फिर उसी के हाथों में चला जायगा।

११वीं शताब्दी के मध्यकाल तक सलजूक़ों और मुसलमानों ने धीरे-धीरे निकट पूर्व पर अधिकार करने के बाद अनातोलिया के प्रान्त का नाम बदलकर 'रूम' रख दिया। सलजूक़ धीरे-धीरे पश्चिम की ओर बढ़ने लगे, परन्तु उनका साम्राज्य अधिक दिनों तक न रह सका। इसका मुख्य कारण यह था कि देश को विजय करने के बाद वे उसे अपने सरदारों को जागीरों के रूप में बाँटने के लिए विवश हो जाते थे, क्योंकि यदि ऐसा न किया जाता तो ये सरदार स्वयं आपस में लड़ने लगते थे। १३वीं शताब्दी में जब एक विख्यात सलजूक़ सुल्तान राज्य करता था तब अनातोलिया में भयंकर अराजकता फैली। उस समय कुस्तुन्तुनिया का बज़नतीनी सम्राट् क्रूर ग्रहों के फेर में था,

इसलिए वह इस सुनहरे अवसर से लाभ उठाकर न तो अपने राज्य को ही बढ़ा सका और न उसकी सीमाओं को ही स्थायी बना सका।

'रुम' प्रान्त की एक जागीर पर अरतुग़रल नामी एक स्थानीय सरदार का अधिकार था। कदाचित् इसी सरदार ने सुल्तान की आज्ञा से बज़नतीनी प्रान्त 'निकिया' के समीपवर्ती महत्त्वपूर्ण नगर की रक्षा का कार्य अपने कन्धों पर ले लिया था। १२८१ ई० में इस सरदार की मृत्यु के पश्चात् इसका पुत्र उस्मान उत्तराधिकारी हुआ। उस्मान ने अपनी जागीर को बढ़ाया और मुख्य-मुख्य सलजूक़ सरदारों को भी अपनी ओर मिला लिया। उस्मान का पुत्र 'औरहान' पहला तुर्क था जिसे योरप में गैलीपोली के स्थान पर पहलेपहल पैर जमाने का अवसर मिला। उसके बाद औरहान के उत्तराधिकारियों ने समस्त बल्कान पर अधिकार कर लिया। १४५३ ई० में चौथी बार घेरा डालने के बाद उस्मानी सुल्तान महमत द्वितीय, कुस्तुन्तुनिया पर स्वत्व स्थापित करने में सफल हुआ। उस्मान के उत्तराधिकारियों ने केवल एक नये वंश ही की नहीं, वरन् एक नये राज्य की नींव डाली। यद्यपि इस समय सलजूक़ राज्य में कुप्रबन्ध और गृहयुद्ध का बोलबाला था, तथापि उस्मान के उत्तराधिकारियों ने किसी विदेशी शक्ति को देश पर आक्रमण करने का अवसर नहीं दिया। उनके इस सफल रक्षात्मक कार्य से प्राचीन

राज्य के स्थान पर उस्मानी राज्य स्थापित हो गया। यह महत्त्वपूर्ण कार्य इसलिए भी मनोरंजक है कि सन् १९१९ में जब उस्मानी राज्य छिन्न-भिन्न हो रहा था तो कमाल-पाशा ने उसके स्थान पर जनतन्त्र टर्की राज्य की नींव डाल-कर अपने देश के इतिहास को पुनः जागृत कर दिया।

अपनी कुछ सामाजिक संस्थाओं के विचार से टर्की के नये राज्य में बहुत सी विशेषताएँ हैं। सलजूक़ी तुर्क, जो उस्मानी वंश की एक शाखा थे, मध्य-एशिया के घास के मैदानों से आये थे। आरम्भ में वे गृहविहीन विजेताओं के समान थे और जहाँ भी गये सैनिक बनकर गये, परन्तु वहाँ पहुँचते ही बादशाह बन बैठे। खेतीबारी से उन्हें अधिक लगाव न था। वे व्यापार करना बिलकुल न जानते थे। हाँ, उन्हें पशु-पालन का यथेष्ट अनुभव था, इसलिए वे अपनी प्रजा को पशु-पालन की शिक्षा देना ही अपना मुख्य कर्त्तव्य समझते थे। उनके कोष में 'प्रजा'-शब्द का अर्थ केवल मनुष्यों का समुदाय था। इसलिए यह शब्द स्वयं उनके राजनैतिक कर्त्तव्यों का स्पष्टीकरण कर देता है। यह बात माननी ही पड़ती है कि उनके काम और उसके फल ही से उस्मानी राज्य की आर्थिक नींव पड़ी। पशुओं का दूध दुहना, उनका ऊन काटना और उनकी खाल उतारना ही इन लोगों का मुख्य धन्धा था। जब तक प्रजा शान्तिपूर्वक रहती, वे उसके निजी जीवन में हस्तक्षेप न करते थे। विभिन्न जातियों

और धार्मिक संस्थाओं को अपने-अपने विशेष चिह्नों को सुरक्षित रखने की स्वाधीनता थी। परन्तु जब कोई समुदाय या वर्ग विद्रोह करने लगता तो सुलतान के दास उसको दबाने में बड़ी क्रूरता से काम लेते थे।

दास, जो साधारणतया सैनिक और प्रबन्ध-कार्यों में नियुक्त किये जाते थे, प्रायः मुसलमान नहीं होते थे। बालकों को कम आयु में दास बनाकर सुलतान के दरबार में बड़ी तत्परता से शिक्षा दी जाती थी और इसके बाद यद्यपि उनकी हैसियत दास से अधिक न होती थी, फिर भी उनको उच्च पदों पर रखा जाता था। इस प्रकार उनकी गिनती सुलतान के मुख्य व्यक्तियों में होने लगी। यही कारण था कि सुलतान के वंश या नस्ल से सम्बन्ध न रखते हुए भी, वे अपना कर्त्तव्य-पालन बड़ी सचाई से करते थे। उस्मानी राज्य के उन्नति-काल तक यही चलन रहा, परन्तु सन् १५६६ के बाद दास और मुसलमान अपने अपने पुत्रों को उच्च पदों पर नियुक्त कराने के लिए प्रयत्नशील रहने लगे। दासों में अब पहले के समान अनुशासन और कार्यपटुता न रही। राज्य के ये रक्षक अब या तो एक दूसरे को नीचा दिखाने के लिए तत्पर रहते थे, अथवा जन-साधारण से कुचक्र चलाकर निर्बल राज्य को और अधिक निर्बल बनाने का प्रयत्न करते थे।

सुलेमान महान् के समय में ( सन् १५२० से लेकर सन्

१५६६ तक ) यह विचित्र संगठन अपनी उन्नति के शिखर पर पहुँच गया। उस समय उस्मानी साम्राज्य वियना से यमन तक और ईरान से यूनान तक फैला हुआ था। परन्तु यह विजय-क्रम अधिक काल तक स्थिर न रह सका और महमत चतुर्थ के पश्चात् साम्राज्य-पतन के लक्षण दिखाई देने लगे। सन् १६८७ के पश्चात् उस्मानी साम्राज्य को एक ओर रूस के ज़ार और दूसरी ओर मध्य-योरप के हेप्स-बर्ग नाम्नी शक्ति का सामना करना पड़ा। इस प्रकार यह साम्राज्य चक्की के दो पाटों के मध्य में आ गया। इसका अन्तिम परिणाम यह हुआ कि तुर्कों की दशा दिन-प्रतिदिन क्षीण होती गई। यहाँ तक कि रूस के षष्ठवर्षीय युद्ध के पश्चात् उस्मानी साम्राज्य के समग्र अंग शिथिल पड़ गये।

इन सब बातों से ज्ञात होता है कि उस्मानी साम्राज्य का जिस गति से उत्थान हुआ था, उसी गति से उसका पतन भी होने लगा। यदि योरप की अन्य शक्तियाँ कुस्तुन्तुनिया और दर्रे दानियाल पर अधिकार करने के सम्बन्ध में रूस के ज़ार के मार्ग में अड़चन न पैदा करतीं तो इस साम्राज्य की संगठित शक्ति और भी द्रुतगति से नष्ट-भ्रष्ट हो जाती। १६वीं शताब्दी में ब्रिटेन, फ्रांस, आस्ट्रिया, हंगरी और जर्मनी योरप के इस रोगी को समय-समय पर इसलिए शक्ति प्रदान करते रहे जिससे रूस के विरुद्ध वह उनके लिए ढाल का काम देने के अतिरिक्त बासफ़ोरस के जलडमरूमध्य के रक्षक

का भी कार्य करता रहे। इस प्रकार क्रीमिया के युद्ध में—सन् १८५४ से १८५६ तक—ब्रिटेन और फ़्रांस ने रूस के विरुद्ध टर्की को सहायता दी। इसके पश्चात् सन् १८७८ में योरप की सब शक्तियों ने मिलकर बर्लिन में इस उद्देश्य से एक कान्फ़्रेंस की कि बल्कान के ईसाइयों को रूस के प्रभाव में आने से रोका जाय; क्योंकि रूस की सहायता से ये लोग उस्मानी साम्राज्य से पृथक् होकर स्वाधीन राज्य स्थापित करने जा रहे थे।

इन सब बातों के होते हुए भी टर्की बड़ी शीघ्रता से पतन की ओर बढ़ता जा रहा था। फ़्रांस ने सन् १८३० में अलजीरिया पर और सन् १८८१ में ट्यूनिस पर अधिकार कर लिया था। इसी प्रकार ब्रिटेन ने सन् १८७८ में साइप्रेस पर और सन् १८८२ में मिसर पर अपना अधिकार जमा लिया था। सन् १९११ में ट्रिपोली भी तुर्कों के हाथ से निकलकर इटली के अधिकार में चला गया। सन् १७८३ में काले सागर और बल्कान की ओर रूस ने क्रीमिया और जार्जिया को दबा लिया। इसके अतिरिक्त सन् १८१७ में सर्विया ने, सन् १८२९ में यूनान ने, सन् १८६१ में रूमानिया ने और १९०८ में बलगारिया ने पूर्ण स्वाधीनता की घोषणा कर दी। जिस टर्की ने सन् १५२६ में हंगरी की सेनाओं को पराजित करके सारे देश पर अधिकार कर लिया था और उसके एक ही शताब्दी के पश्चात् वियना को भी घेर लिया था,

सन् १९१३ में उसी टर्की के पास योरप में पूर्वी थ्रेस को छोड़कर कुछ न रहा। सन् १९१४ के महायुद्ध में टर्की ने जर्मनी का साथ देकर अपने रहे-सहे साम्राज्य के कुछ और भाग भी खो दिये। टर्की के पूर्वी प्रान्तों में लारेंस और एलबनी के आक्रमणों का यह परिणाम हुआ कि स्याम, ईराक, फ़िलस्तीन और अरब पर क्रमानुसार फ़्रांस, ब्रिटेन और अरबों का अधिकार हो गया। सन् १९१८ में जब टर्की और मित्रराष्ट्रों के मध्य सन्धि हुई तब मित्रराष्ट्रों की सेनाएँ कुस्तुन्तुनिया, दर्रे दानियाल और साइलीशिया पर अधिकार कर चुकी थीं और अनातोलिया भी सुरक्षित न था। १० अगस्त, सन् १९२० की सन्धि के अनुसार टर्की के अधिकृत प्रान्तों की संख्या और भी कम हो गई। इस सन्धि में यह निश्चित हुआ कि दर्रे दानियाल और कुस्तुन्तुनिया पर अन्तरराष्ट्रीय अधिकार रहे। स्मर्ना और उसके पीछे का प्रदेश यूनान को दे दिया जाय। भूमध्यसागर का तट इटली और फ़्रांस के मध्य बाँट दिया जाय तथा ब्रिटेन और अमेरिका स्वतन्त्र अरमनी देशों का संरक्षण करें। इसमें किंचित्-मात्र भी सन्देह नहीं कि इस सन्धि ने टर्की को अरतुग़रल की उस जागीर के बराबर कर दिया, जिसने शनैः शनैः विस्तार करके उस्मानी साम्राज्य का रूप ले लिया था।

---

# अध्याय ४

## योरप की सभ्यता और टर्की के सुधार

रूस और टर्की के षष्ठवर्षीय युद्ध ने उस्मानी साम्राज्य के इतिहास में एक नये अध्याय का आरम्भ किया ; क्योंकि इस युद्ध से स्पष्ट हो गया कि पाश्चात्य देशों की सेनाएँ टर्की की सेनाओं से श्रेष्ठ हैं। प्रारम्भिक युद्धों में सुल्तान की संगठित और ट्रेनिंग पाई हुई सेनाएँ, जिनमें अधिकतर ग़ुलाम-वंश के वीर थे, पश्चिमी सेनाओं से श्रेष्ठ प्रतीत होती रहीं। परन्तु इस युद्ध में रूस की नवीन सेनाएँ अपने अनुशासन, संगठन और युद्ध-कला के विचार से श्रेष्ठ प्रतीत हुईं। सन् १७७० में राजनैतिक और सामाजिक विप्लव की वे लहरें उठ चुकी थीं, जिन्होंने बाद में न केवल पाश्चात्य देशों को ही, वरन् सारे संसार को अपनी गोद में छिपा लिया। योरप में बहुत ही संगठित और शक्तिशाली राष्ट्रीय शक्तियाँ स्थापित हो चुकी थीं। लोगों में दिन-प्रतिदिन राष्ट्रीय भावनाएँ बढ़ती जा रही थीं। इस भावना के साथ ही साथ स्वाधीनता, प्रतिनिधित्व और अपने अधिकारों का प्रश्न भी पैदा हो गया था। मनुष्य अपने जीवन में हर प्रकार से विज्ञान की सहायता लेने लग गया था। यथार्थ में यह वही समय था जब पश्चिमी योरप में औद्योगिक विप्लव के लक्षण प्रतीत

होने लगे थे, परन्तु पूर्वी देश अब भी प्राचीन विचारों में डूबे हुए थे। टर्की में इस समय राज्य-प्रबन्ध करना तो एक ओर रहा, कुचक्रों के कारण स्वयं सुल्तान के महल के प्रबन्ध में बहुत सी बुराइयाँ पैदा हो गई थीं। इस समय पश्चिम की अपेक्षा पूर्व का पलड़ा बहुत ही हल्का था, इसलिए सबसे पहले टर्की को ही इसका फल भोगना पड़ा, यद्यपि १८वीं और १९वीं शताब्दी में उन सब पूर्वी देशों की भी वही दशा हुई जो पश्चिमी देशों के लक्ष्य में आये।

इसमें आश्चर्य नहीं कि प्रारम्भ में तुर्कों को पाश्चात्य सभ्यता के अपनाने में हिचकिचाहट हुई, क्योंकि इस्लाम ने उन्हें भाग्य पर भरोसा करने की शिक्षा दी थी। वे अपने धर्म में ईसाइयों की सी कायापलट करने और आध्यात्मिक उन्नति की अपेक्षा भौतिक उन्नति को प्रोत्साहित करने के लिए प्रस्तुत न थे। पाश्चात्य सभ्यता ने सामाजिक विप्लव से बहुत पहले ही सुधार आरम्भ कर दिये थे। इसलिए सबसे पहले तुर्कों को ही पश्चिमी सेनाओं की श्रेष्ठता के बारे में ज्ञान हुआ। उस्मानी शासन अब भी पुराने ढर्रे पर चल रहा था और सुधारों की ओर कोई ध्यान नहीं दिया जा रहा था।

सुल्तान केवल एक ही दिशा में सुधार करने के लिए उद्यत था, परन्तु इस ओर सुधार करने से यह सम्भव न था कि पाश्चात्य विचार जनता तक पहुँचकर अपना प्रभाव बढ़ाते। सुल्तानों ने सबसे पहले सेना में सुधार करना

आरम्भ किया। प्रशा का सैनिक मिशन १८वीं शताब्दी से टर्की में बड़ी तत्परता से अपना कार्य कर रहा था। १९वीं शताब्दी के आरम्भ में मुहम्मदअली ने नेपोलियन के सैनिक अफ़सरों को मिसर की सेना में नियुक्त किया। सेना में अनिवार्य भर्ती और लम्बी अवधि तक नौकरी करने के नियम बनाये गये जिससे अनातोलिया के किसानों पर बोझ तो अधिक आ पड़ा, परन्तु इससे सैनिक अनुशासन, संगठन और 'करों' के वसूल करने पर अच्छा प्रभाव पड़ा। इन सब बातों के होते हुए भी तुर्क पाश्चात्य संस्कृति से अब भी उतने ही दूर थे जितने कि इन सुधारों के होने से पहले; क्योंकि इनका मुख्य उद्देश्य उस्मानी साम्राज्य को सुरक्षित रखने के अतिरिक्त और कुछ भी न था।

साम्राज्य की केवल अन्यान्य संस्थाओं में उचित सुधार किये विना सेना को पश्चिमी रंग में रँग देने से देश की आर्थिक दशा पर उनका बहुत ही भयंकर प्रभाव पड़ा। उस्मानी साम्राज्य के आर्थिक नियम अब भी पुराने ही थे। उसकी आय का मुख्य साधन किसान ही थे, जिन पर ऋण का भार प्रतिदिन बढ़ता ही जाता था। देश का सारा व्यापार विदेशी व्यापारियों के हाथों में था। पाश्चात्य सुधारों ने सेना का व्यय इतना बढ़ा दिया कि पुराना आर्थिक संगठन उसे पूरा न कर सका। इसका यह परिणाम हुआ कि एक ओर तो किसानों पर करों की भरमार होने

लगी और दूसरी ओर सुल्तान को पश्चिमी व्यापारियों से ऋण लेना पड़ा, जो देश के सारे व्यापार पर अधिकार कर चुके थे। यह सब व्यय इस विचार से किया गया कि प्रजा विद्रोही न होने पावे ; क्योंकि यह पूँजी एक ऐसे काम में लगाई जा रही थी जिससे कोई आय न होती थी, इसलिए शासक ऋण का ब्याज तक न दे पाते थे। धीरे-धीरे टर्की के आर्थिक संगठन पर विदेशी व्यापारियों का अधिकार हो गया। २०वीं शताब्दी के आरम्भ में उस्मानी सत्ता असंगठित अल्पसंख्यक जातियों को अपने अधीन रखने के प्रयत्न में लगी हुई थी, यद्यपि विदेशी व्यापारियों ने देश की आर्थिक और व्यापारिक संस्थाओं पर अपना अधिकार कर लिया था। रूस से द्वितीय युद्ध समाप्त होने के पश्चात् सन् १८८२ में जब देश की आर्थिक दशा बहुत ही गिर गई, तब इन विदेशी व्यापारियों की कौंसिल ने राजकीय आय के छः मुख्य-मुख्य साधनों पर अधिकार करके उनका प्रबन्ध अपने हाथों में ले लिया।

इन सब बातों के होते हुए भी जनता में पश्चिमी ढंग की राजनैतिक स्वतन्त्रता प्राप्त करने की भावना जागृत हो चुकी थी और लक्षणों से पता चलता था कि अब उस्मानी सत्ता अधिक काल तक स्थिर न रहेगी। सन् १८५० और १९२० के मध्य में तीन ऐसे आन्दोलन आरम्भ हुए जो पश्चिमी ढंग पर देश में सुधार करना चाहते थे। तीसरा आन्दोलन,

जिसे कमाल अतातुर्क ने आरम्भ किया था, सफल हुआ। इस विषय में अब भी सन्देह है कि यदि पहले के दो आन्दोलनों ने सुधार के लिए पृष्ठभूमि न तैयार की होती तो तीसरा आन्दोलन इतना सफल होता या नहीं।

टर्की ने सन् १८५६ में ब्रिटेन और फ्रांस की सहायता से रूस को हरा दिया, इसलिए उस पर विदेशी शक्तियों का दबाव कम हो गया। इसके अतिरिक्त इस सम्मिलित कार्य से टर्की का पश्चिम की दो उन्नत शक्तियों से मेल हो गया। इसलिए स्पष्ट ही राजनैतिक वातावरण भी उन्नति और सुधार करने के लिए उपयुक्त हो गया। ऐसे अवसर पर टर्की के एक उन्नतिशील राज्य के संरक्षक मिधत पाशा ने बलगारिया और ईराक में स्थानीय सुधार करने के महान् भार को अपने ऊपर ले लिया। मिधत पाशा ने विभिन्न राष्ट्रीय नेताओं को प्रबन्ध-कार्यों में सम्मिलित करके पुलिस की और देश की आर्थिक दशा का सुधार करना आरम्भ कर दिया। प्रारम्भिक शिक्षा [illegible] ऐसे स्कूल भी खोले गये जहाँ प्रत्येक वर्ग के विद्यार्थी एक साथ शिक्षा पा सकते थे। इस समय तुर्कों का यह विचार था कि यदि विद्यार्थी विद्या प्राप्त करने के लिए पाश्चात्य देशों में भेजे गये तो वे उस्मानी सत्ता के विरुद्ध हो जायँगे। मिधत पाशा की यह अभिलाषा थी कि वह एक ऐसी सत्ता स्थापित करें, जिसमें अपने-अपने अनुपात से देश की सब जातियों के प्रतिनिधि सम्मिलित

हों। परन्तु इस सम्बन्ध में उन्हें इस कारण अधिक सफलता न मिल सकी, क्योंकि टर्की की शासन-सत्ता इतने तीव्र सुधारों के करने के लिए उद्यत न थी। सन् १८७६ में सुल्तान अब्दुलहमीद ने अत्याचार करने आरम्भ कर दिये और सबसे प्रथम मिधत पाशा को ही इसका शिकार बनना पड़ा। वास्तव में सुल्तान अब्दुलहमीद ने चित्र का एक ही भाग देखा था, दूसरे भाग को नहीं; क्योंकि इस समय बल्कान बड़ी शीघ्रता से पूर्ण स्वाधीनता की ओर बढ़ रहा था और राज्य की दूसरी जातियों की स्वतन्त्रता की माँग भी मिधत पाशा की योजना से बढ़-चढ़कर थी।

सन् १९०८ में नवयुवक तुर्कों के विद्रोह के बाद सुधारों का दूसरा आन्दोलन आरम्भ हुआ, परन्तु यह आन्दोलन भी राष्ट्रीयता की बलि चढ़ गया। इस सम्बन्ध में यह बात ध्यान देने योग्य है कि पाश्चात्य सुधारों के नये आन्दोलन में नवयुवक तुर्क शासकों का हाथ बहुत अधिक था; क्योंकि सुलतान अब्दुलहमीद के शासन-काल में केवल इन्हीं लोगों को इस बात की आज्ञा थी कि वे जैसा उचित समझें, पाश्चात्य देशों से मेलजोल बढ़ावें। इस स्थान पर यह बता देना भी आवश्यक है कि सुलतान अब्दुलहमीद के शासन-काल में पश्चिमी पुस्तकों को पाठ्य-क्रम में रखने की मनादी थी। अनवर पाशा इन नवयुवक शासकों के नेता थे और संगठित व उन्नतिशील कमेटी को एक संगठित संस्था

का स्थान प्राप्त था। इन नवयुवक शासकों में वातावरण और ट्रेनिंग की कमज़ोरी स्पष्ट रूप से झलक रही थी। राज्य को बचाने के लिए सेना को तो पश्चिमी साँचे में ढाल लिया था, परन्तु अन्य संस्थाओं में किसी प्रकार के सुधार नहीं किये गये थे। इस प्रकार की नीति का आभास नौजवान लोगों में भी उतना ही कम था जितना कि सुल्तान में, जो सिंहासन से उतार दिया गया था। संगठित व उन्नतिशील कमेटी ने टर्की की सारी जातियों को समान प्रतिनिधित्व देने के बारे में एक योजना तैयार की। परन्तु वह इस बात को बिलकुल भूल गई कि देश की सब जातियाँ उस स्थान से आगे बढ़ गई हैं जहाँ वे एक विदेशी सत्ता से केवल समान प्रतिनिधित्व पाकर सन्तुष्ट हो जायँ। कारण, अब वे जातियाँ अपनी स्वतन्त्रता की नींव डाल चुकी थीं। इसके अतिरिक्त नौजवान लोगों ने उस्मानी शासन-सत्ता के उन सिद्धान्तों से भी नाता तोड़ लिया था, जो हमेशा से चले आ रहे थे। इस समय तुर्कों का नया राज्य यथार्थ में टर्की राज्य था और वे इस शर्त पर दूसरी जातियों को समानता का पद देकर एकता और सहयोग का निमन्त्रण दे रहे थे जिससे वे अपने को तुर्क समझने लगें। ऐसे भीषण समय में इन सेनाओं के लिए जिन्होंने अराष्ट्रीय उस्मानी सत्ता से पृथक् होकर स्वाधीनता की घोषणा कर दी थी, उन्हें यह शर्त मान्य न थी कि वे अपने

को तुर्क कहें। तात्पर्य यह कि सन् १६०८ के आन्दोलन ने साम्राज्य को सुदृढ़ बनाने के स्थान पर उसे अत्यधिक निर्बल कर दिया। पहले बलगारिया ने स्वतन्त्रता की घोषणा की। फिर सन् १६१२ में बल्कान राज्यों ने अस्थायी संगठन करके तुर्कों को मुर्तज़ा नदी के पश्चिम के बचे-खुचे प्रान्तों से निकालने का निश्चय कर लिया।

सम्भव है, गत महायुद्ध में नौजवान तुर्कों को यह आशा रही हो कि मध्य की शक्तियों को ब्रिटेन और रूस के विरुद्ध सहायता देने से उनके देश का राजनैतिक पद बढ़ जाय, परन्तु यथार्थ में यह युद्ध टर्की के पूर्वी प्रान्तों--स्याम, ईराक़ और फ़िलस्तीन—के लिए उतना ही हानिकारक सिद्ध हुआ जितना कि बल्कान के युद्ध पश्चिमी प्रान्तों के लिए हानिकारक सिद्ध हुए थे। अरबों ने मित्रराष्ट्रों की सहायता पाकर विद्रोह कर दिया और तुर्कों को एशिया माइनर तक खदेड़ दिया। सन् १६१८ में तुर्कों के मूलनिवास-स्थान अनातोलिया पर भी पूर्व और पश्चिम से आक्रमण हुआ।

नौजवान तुर्कों के क्रान्तिकारी आन्दोलन के असफल होने का प्रथम कारण यह था कि उनका सारा उत्साह अराष्ट्रीय उस्मानी सत्ता से सम्बद्ध था। संगठित व उन्नतिशील कमेटी इसी सोच-विचार में रही कि वह साम्राज्य की रक्षा का प्रबन्ध करे या राष्ट्र की ओर ध्यान दे; क्योंकि इस कमेटी ने इन दोनों कार्यों को साथ-साथ पूरा करने का प्रयत्न किया,

इसलिए वह किसी में सफल न हुई। इस असफलता के और भी कारण थे। जैसे, इसे अब्दुलहमाद् के समय के उन पुराने और घूसखोर अफ़सरों पर भरोसा करना पड़ा जो अपने भीतर पश्चिमी विचारों की विशेषता को समझने की योग्यता न रखते थे। ऐसी दशा में केवल सैनिकों को पश्चिमी शिक्षा देने का यह परिणाम हुआ कि सन् १९०८ में नगर की जनता में कोई भी इस योग्य न था, जो सुधार के कार्य को कर सकता। यहाँ इस बात को स्मरण रखना चाहिए कि सन् १९०८ के आन्दोलन को चलानेवाले अनवर पाशा और सन् १९१९ के आन्दोलन के नेता कमाल पाशा, दोनों ही सैनिक थे। नौजवान तुर्कों के समय में देश की किसी भी आर्थिक समस्या को न सुलझाया जा सका। देश के सारे बैंक विदेशियों के हाथ में थे और वही उन्हें चला भी रहे थे। सन् १९०८ तक तुर्क अपनी समस्त आर्थिक स्वतन्त्रता खो चुके थे। उस्मानी बैंक पर फ़्रांसी-सियों का अधिकार था। रेलवे की सारी इमारतें जर्मन पूँजी से बनी थीं। सन् १९१० तक टर्की पर जर्मनी के ऋण का भार बहुत बढ़ चुका था। देश की सारी नहरों, बन्दर-गाहों, कोयले की खानों, बिजलीघरों और पानी के नलों पर विदेशियों का अधिकार था। नौजवान तुर्क इस प्रकार की दासता से बचने का कोई उपाय न ढूँढ़ सके, बल्कि उन्होंने अपने देश पर जर्मनी के ऋण का भार और अधिक

बढ़ा दिया। यही नहीं, बल्कि सन् १९१४ के महायुद्ध में कूदकर उन्होंने अपनी अज्ञानता का परिचय दिया।

फिर भी सन् १९०८ के आन्दोलन के बाद तुर्कों के भीतर एक प्रकार की बौद्धिक हलचल पैदा हो गई जो एक नवीन और लम्बी अवधि तक होनेवाले युद्ध का परिणामस्वरूप थी। यही कारण था कि इस प्रकार के बहुत से सुधार और परिवर्तन प्रकट हुए जो भविष्य में कमाली आन्दोलन के लिए पृष्ठभूमि बन गये। इसके बाद शिक्षा-विभाग में पश्चिमी विचारों को अपनाने के बारे में जितने प्रतिबन्ध लगे हुए थे, उन्हें हटा दिया गया और राष्ट्रीय शिक्षा की एक पृथक संस्था बनाई गई। इस्तमबोल-विश्वविद्यालय ने कक्षाओं को बढ़ाकर संस्था को और अधिक विस्तृत कर दिया। इसका परिणाम यह हुआ कि सन् १९२२ तक नये शासन को चलाने के लिए यथेष्ट संख्या में नवयुवक प्राप्त हो गये; क्योंकि मिधत पाशा और अनवर पाशा केवल इसलिए अपने प्रयत्नों में असफल हो रहे थे कि उस समय उनकी योजनाओं की विशेषताओं को समझनेवाले बहुत कम लोग थे। इसके अतिरिक्त शासन-सत्ता का प्रबन्ध-विभाग भी उनकी योजनाओं का सहायक न था, इसलिए अतातुर्क के सुधारों से पहले देश की यह शिक्षा-सम्बन्धी उन्नति बहुत ही महत्त्वपूर्ण थी। इस शिक्षा-सम्बन्धी परिवर्तन के साथ ही साथ देश में एक सांस्कृतिक आन्दोलन भी चल रहा था,

जिसको तुर्कों के गृह-आन्दोलन के नाम से पुकारा जाता था। यह आन्दोलन जन-साधारण में मेल-मिलाप और राष्ट्रीय संस्कृति की भावनाओं को उभारना चाहता था। इसलिए इस सम्बन्ध में लेक्चरों का भी प्रबन्ध किया गया और ऐसे केन्द्र भी खोले गये जहाँ जनता एकत्र होकर सम्बन्धित मामलों पर वाद-विवाद कर सकती थी। प्रथम महायुद्ध आरम्भ होने के पहले केवल अनातोलिया ही में इसकी २५ शाखाएँ थीं, परन्तु सर्वसाधारण के लिए एक राष्ट्रीय आन्दोलन चलाने के प्रारम्भिक प्रयत्नों के सिलसिले में किये गये समग्र कार्यों को तुर्क नवीनता की दृष्टि से देखते थे।

युद्धकाल में कुछ विधान-सम्बन्धी सुधार भी किये गये, जैसे सितम्बर सन् १९१४ में विदेशियों के विशेष अधिकारों का अन्त करके नागरिक व व्यापारिक क़ानूनों की छानबीन की गई। कारागारों के सम्बन्ध में सुधार की तजवीज़ों के पूरा हो जाने के बाद दशमलव चिह्न को प्रचलित करने के लिए एक अलग क़ानून बनाया गया। इन बातों से तुर्कों की शासन-सत्ता को नये साँचे में ढालने के लिए किये गये प्रयत्नों का आभास मिलता है, इसलिए इनका महत्त्व भी अधिक है। तुर्कों में इस समय तक केवल उन्हीं विभागों में पाश्चात्य सिद्धान्तों का समावेश किया गया था, जहाँ उनकी अत्यधिक आवश्यकता थी, जैसे—

सेना-विभाग में। परन्तु इन बातों से न केवल शासन-प्रबन्ध में ही गड़बड़ी पैदा हुई, बल्कि प्रजा नये और पुराने, दोनों सिद्धान्तों से मुँह मोड़ने लगी। उन सुधारों ने—जिन्होंने कमाली विप्लव के लिए पृष्ठभूमि तैयार की थी—स्त्री-जाति की भलाई के लिए भी बहुत कुछ किया। यद्यपि नवयुवकों का वर्ग उस समय भी स्त्रियों पर से उन प्रतिबन्धों को हटाने के लिए प्रस्तुत न था जो इस्लाम-धर्म ने उन पर लगाये थे, तथापि मेल-मिलाप और उन्नति की कमेटी के बहुत से सुधारक यह बात अच्छी तरह समझ चुके थे कि यदि स्त्रियों को इस्लामी प्रतिबन्धों से मुक्त न किया गया तो नये शासन-प्रबन्ध के स्थापित करने में अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ेगा। तुर्क नेता और फ़िलासफ़र ज़ियागोकल्प ने—जो योग्यता के विचार से प्रथम महायुद्ध में यथार्थ में टर्की के अधिनायक थे—स्त्रियों के अधिकारों और स्वतन्त्रता की बड़ी मदद की। उन्होंने तुर्कों को बताया कि प्राचीन तूरानी रीति-रिवाज के अनुसार स्त्रियों को पुरुषों के बराबर अधिकार प्राप्त थे और प्राचीन काल के तुर्क तूरानी सिद्धान्तों पर चलते थे। परन्तु जब उन पर बज़नतीनत और इस्लाम का प्रभाव पड़ा, तब उन्होंने तूरानी सिद्धान्त छोड़ दिये। ज़ियागोक़ल्प ने अपने निजी प्रभाव से काम लेकर प्रथम महायुद्ध के समय ही में स्त्रियों को बहुत अधिकार दिला दिये थे। सन् १९१६ में घरेलू क़ानून

को धार्मिक प्रभाव से निकालकर नागरिक शासकों के सिपुर्द कर दिया गया। सन् १९१७ में यह क़ानून बना दिया गया कि जब तक पहली स्त्री लिखकर अपनी स्वीकृति न दे दे तब तक कोई व्यक्ति दूसरा विवाह नहीं कर सकता। इसके साथ ही साथ विश्वविद्यालयों में लड़कियों के लिए अलग कक्षाएँ खोल दी गईं। उस समय तक लड़कियों को पश्चिमी शिक्षा दिलाने में इतना व्यय होता था कि धनी लोगों को छोड़कर और कोई अपनी लड़कियों को शिक्षा न दिला सकता था। परन्तु अब लड़कियों की शिक्षा सार्वजनिक कर दी गई थी, इसलिए तुर्कों के गृह-आन्दोलन के भाषणों को सुनने के लिए पुरुषों के अतिरिक्त स्त्रियाँ भी आती थीं और कभी-कभी भाषण भी देती थीं। यदि इस काल को कमाली विप्लव के कार्यकर्ताओं की ट्रेनिंग का समय कहा जाय तो कोई अत्युक्ति न होगी।

सम्भव था, ये सुधार युद्ध के पश्चात् प्रभावहीन पड़ जाते। परन्तु युद्ध का भी स्त्रियों की स्वाधीनता पर अच्छा प्रभाव पड़ा। जब पुरुष सेना में भर्ती हो गये, तब स्त्रियों ने दफ़्तरों में और प्रबन्ध-सम्बन्धी उच्च पदों पर कार्य करना आरम्भ कर दिया। इसके अतिरिक्त उन्होंने नर्स बनकर घायल सैनिकों की सेवा की और लेबर बटालियन का हाथ बटाया। देहाती स्त्रियाँ—जिन्होंने अपनी शहरी बहनों की अपेक्षा अधिक परिश्रमी बनकर अपनी स्वाधीनता

बनाये रखी थी—इस समय अन्न पहुँचाने में राष्ट्र की सहायता में लग गईं। सम्भव था, क़ानून द्वारा किये गये ये सुधार हार्दिक उत्साह के विना सफल न होते, परन्तु युद्ध की कठिनाइयों ने इस कमी को पूरा कर दिया। इन सब बातों को देखने के बाद हम बड़ी मालता से इस परिणाम पर पहुँचते हैं कि आनेवाली क्रान्ति की इस पृष्ठभूमि ने न केवल तुर्कों के जीवन और विचारों को ही बदल दिया, बल्कि उनकी चिन्ताओं और शंकाओं को दूर करके उनके भीतर खोज और छानबीन करने की एक नई बात पैदा कर दी। यह सच है कि युद्ध के समाप्त होने के कुछ दिन बाद तुर्कों को कोई सीधा पथ और सच्चा पथ-प्रदर्शक न मिल सका। परन्तु—"जिन खोजा तिन पाइयाँ।" अन्त में शाही सेना के सरदार मुस्तफ़ा कमाल पाशा ने उनकी इस कमी को भी पूरा कर दिया।

---

# अध्याय ५

## मुस्तफ़ा कमाल पाशा

सलोनिका की प्रसिद्ध बस्ती के एक छोटे मोहल्ले में अलीरज़ा और ज़ुबैदा खानम का छोटा-सा मकान था। इसी स्थान पर प्रकृति की गोद में टर्की का वह फूल खिला जिसकी सुगन्ध से सारा देश महक उठा। ज़ुबैदा की
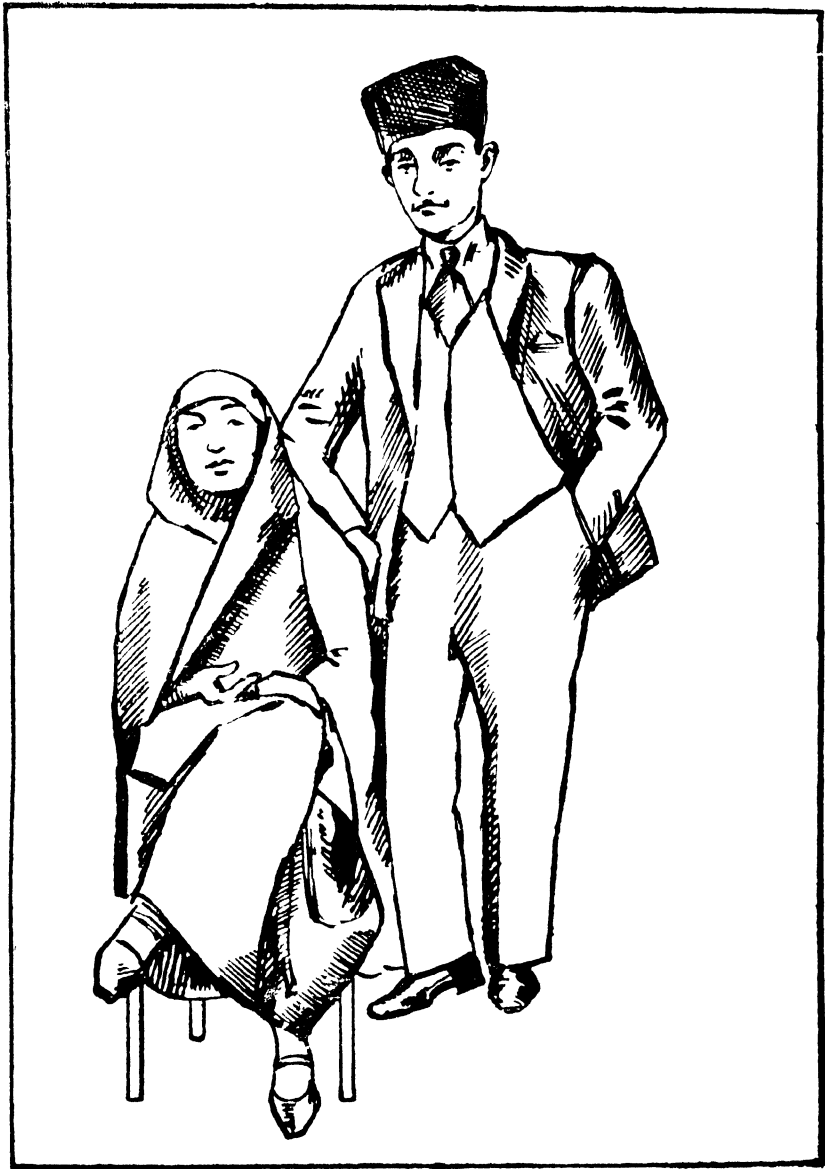
اتاترک اور لطیفہ خانم

अतातुर्क और लतीफ़ा ख़ानम

आयु ३० वर्ष की थी, जब उसकी गोद में यह रत्न आया। अलीरज़ा ने अपने इस प्रिय पुत्र का नाम रसूल की पवित्र आत्मा से सम्बन्ध जोड़ते हुए मुस्तफ़ा रखा। अलीरज़ा टर्की के एक दफ़्तर में अल्पवेतन पर नौकर थे और अवकाश के समय व्यापार करके अपनी आय को कुछ बढ़ा लिया करते थे। ज़ुबैदा पढ़ी-लिखी तो न थी, परन्तु वह राजसी प्रकृति की थी। ज़ुबैदा कुछ लम्बी, सुडौल और तीव्र बुद्धिवाली स्त्री थी और उसकी प्रवृत्ति धार्मिक बातों की ओर लगी रहती थी। पैदा होते ही मुस्तफ़ा अपने माता-पिता के स्नेह का भाजन बन गया। ऐसी दशा में माता के लाड़-प्यार ने उन्हें बर्बाद करने में कोई कसर उठा न रखी, परन्तु महान् पुरुषों पर वातावरण का कोई प्रभाव नहीं पड़ता। स्वभाव से मुस्तफ़ा गम्भीर और मितभाषी थे। उन्हें मा का कहना न मानने में बड़ा आनन्द आता था, जिसका परिणाम यह हुआ कि वह स्वेच्छाचारी हो गये। धीरे-धीरे वह समय आया, जब अलीरज़ा नौकरी छोड़कर लकड़ी का व्यापार करने लगे। मा-बाप को आशा थी कि उनका पुत्र व्यापार में सहायता देगा, परन्तु मुस्तफ़ा ने उस ओर देखा तक नहीं। उनकी प्रारम्भिक शिक्षा मस्जिद के एक स्कूल में हुई। कुछ दिनों बाद वह शमसी आफेन्दी से शिक्षा पाने लगे।

यह क्रम अधिक समय तक न चला। अलीरज़ा की

आकस्मिक मृत्यु ने इस छोटे से परिवार को विपत्ति में डाल दिया। ज़ुबैदा अपने भाई के यहाँ चली गई। मुस्तफ़ा ने खेती का कारबार आरम्भ कर दिया। इस कारबार में उन्हें जो परिश्रम करना पड़ा, उससे उनका शरीर बलिष्ठ हो गया। परन्तु साथ ही साथ वे अधिक गम्भीर और स्वेच्छाचारा हो गये। ११ वर्ष की आयु में उनकी मौसी ने उन्हें फिर स्कूल में भर्ती करा दिया। स्वेच्छाचारी होने से वे गुरु की आज्ञा का पालन नहीं कर सके। अन्त में एक दिन अपने गुरु से लड़ने के बाद उन्होंने स्कूल को छोड़ दिया। चाचा ने ऐसे उद्दंड स्वभाव बालक को सेना में भर्ती करने की राय दी। ज़ुबैदा कुछ और चाहती थी। परन्तु मुस्तफ़ा स्वयं अपने पिता के एक पुराने मित्र की सहायता से सैनिक स्कूल में भर्ती हो गये। यहाँ उन्हें अपने स्वभावानुकूल वातावरण मिला। उनका यह हार्दिक इच्छा थी कि प्रत्येक व्यक्ति उन्हें देखे। इसलिए उन्होंने वहा बातें कीं जिससे वे दूसरों से पृथक् दिखाई दें। इसी सैनिक स्कूल में कप्तान मुस्तफ़ा भी थे। उन्होंने अपने नाम और मुस्तफ़ा के नाम में भेद करने के विचार से मुस्तफ़ा के नाम के साथ कमाल शब्द जोड़ दिया। उस दिन से ज़ुबैदा की आँखों का तारा मुस्तफ़ा कमाल के नाम से मध्याह्नकाल के सूर्य के समान दिन-प्रतिदिन चमकने लगा। १७ वर्ष की आयु में स्कूल में सफलता प्राप्त करके उच्च सैनिक शिक्षा

زبیدہ خانم والدہ اتاترک

अतातुर्क की माँ ज़ुबैदा ख़ानम

के लिए मनास्तिर भेज दिये गये। वहाँ का वातावरण बिलकुल सैनिक था। उस्मानी शासन-सत्ता अपनी अन्तिम घड़ियाँ गिन रही थी। यूनानियों ने क्रीट के द्वीप पर अधिकार कर लिया था। तुर्क सुल्तान अब्दुलहमीद से अप्रसन्न थे। उनकी महान् आत्माएँ कारागार की कठिनाइयाँ झेल रही थीं। चारों ओर क्रान्ति के लक्षण दिखाई दे रहे थे। मुस्तफ़ा कमाल ने इन आन्दोलनों में भाग लेना आरम्भ कर दिया। फ़तही बे से फ़्रांसीसी भाषा सीखी। इसके पश्चात् वालटेयर और रूसो के विचारों का अध्ययन किया। इन पुस्तकों को पढ़ने की मनादी थी, परन्तु कमाल को ऐसी कठिनाइयाँ उपस्थित करने में आनन्द आता था। उन्होंने भाषण देने का भी अभ्यास किया और तुर्कों के खून को अपने ओजस्वी भाषणों द्वारा गरमाना शुरू कर दिया। "टर्की तुर्कों के लिए" का नारा ऊँचा किया और उसी धुन में लगे रहकर उन्नति करते हुए सैनिक कालेज में भर्ती होकर कुस्तुन्तुनिया चले गये। उस समय उनकी अवस्था २० वर्ष की थी। भरपूर जवानी का समय था, परन्तु उनके जीवन में स्त्री नाम के लिए कोई स्थान न था। देश-भक्ति की भावना उन्हें देश-सेवा की ओर खींच रही थी।

सन् १६०५ में वह सैनिक कालेज से कप्तान होकर निकले, परन्तु उनकी विचार-धारा देश और सेना, दोनों की ओर दौड़ रही थी। उनको स्कूल व कालेज का प्रत्येक विद्यार्थी

और उच्च पदाधिकारी क्रान्ति का इच्छुक दिखाई दिया। स्वयं कालेज में 'वतन' नाम की एक संस्था स्थापित थी। उसका लक्ष्य पुरानी सत्ता को बदलकर नई सत्ता स्थापित करना था। मुस्तफ़ा कमाल ने इस संस्था को उन्नत बनाया। जब सुल्तान अब्दुलहमीद को इसकी सूचना मिली, तब वह संस्था सरकारी आज्ञा से तोड़ दी गई। परन्तु जो भावनाएँ उदय हो चुकी थीं, वे न दब सकीं। अब उसके सदस्य गुप्त षड्यन्त्रों में भाग लेने लगे। बहुत समय पहले ज़ुबैदा ने एक धनवान् व्यापारी से दूसरा विवाह कर लिया था, इसलिए मुस्तफ़ा कमाल इस योग्य थे कि 'वतन' की आर्थिक सहायता करके उसे सँभाल लें। उन्होंने एक किराये के कमरे में इसी नाम से एक गुप्त संस्था प्रचलित रखी। बहुत दिनों से पुलिस इसकी खोज में लगी हुई थी। अकस्मात् एक दिन देश-प्रेमियों की इस संस्था के सब सदस्य पकड़ लिये गये। मुस्तफ़ा कमाल भी पकड़कर इस्तमबोल भेज दिये गये। अन्त में सुल्तान के मन्त्रियों ने इस तेजस्वी नवयुवक को सुधार का एक और अवसर दिया और यह अधिक उचित समझा कि ऐसे वीर सैनिक को क़ैद करके उसकी शक्तियों को क्षीण करने की अपेक्षा उससे दमिश्क़ के विद्रोहियों की रोकथाम का कार्य लिया जाय। कारावास से निकालकर मुस्तफ़ा कमाल को जहाज़ पर चढ़ा दिया गया। जहाज़ ने बैरूत पर लंगर डाला और यहीं से मुस्तफ़ा

कमालके सैनिक कार्यों का आरम्भ हुआ। दमिश्क़ की यह पहाड़ी जाति कभी खुले मैदान में आकर न लड़ती थी। इसलिए कोई उल्लेखनीय युद्ध नहीं हुआ। परन्तु फिर भी कमाल को अपनी वीरता दिखाने का अवसर मिला और साधारण युद्धों के पश्चात् यह सेना दमिश्क़ में ठहर गई।

मुस्तफ़ा स्वभाव से ही क्रान्ति के इच्छुक थे। इसलिए उन्होंने दमिश्क़ में भी 'वतन' की एक शाखा स्थापित की और कार्य-क्षेत्र में पदार्पण किया। वातावरण और भूमि दोनों ही तैयार मिली। क्रान्ति का बीज बो दिया। कुछ ही महीनों में सारा स्याम-देश क्रान्ति का इच्छुक हो गया। मुस्तफ़ा कमाल इधर-उधर घूमते रहे और पुलिस उनका पीछा करती रही. परन्तु अफ़सरों की सहानुभूति ने क़ैद होने का अवसर न आने दिया। यहाँ तक कि उन्हें अपनी मातृभूमि सलोनिका को भेज दिया गया।

यहाँ भी मेल-मिलाप व उन्नति की एक नई संस्था स्थापित हो चुकी थी। यह भी क्रान्ति के उपासकों की संस्था थी, परन्तु इसके उद्देश्य और लक्ष्य अन्तरराष्ट्रीय थे। इसके नेता अनवर, जमाल, जावेद, नियाज़ी और तलअत इत्यादि थे, जिन्होंने भविष्य में टर्की में एक बड़ी क्रान्ति की। इन नेताओं ने मुस्तफ़ा कमाल पर बहुत दिनों तक उनकी परीक्षा लेने के विचार से और उनकी मनोवृत्ति का अध्ययन करने के लिए अपनी दृष्टि रखी और बाद में उन्हें

अपने गिरोह में ले लिया। लेकिन उनकी स्वेच्छाचारिता ने उन्हें सबका प्रिय बनने में रोक दिया। वैसे भी मुस्तफ़ा कमाल अन्तरराष्ट्रीय समस्याओं में अधिक दिलचस्पी न रखते थे। उन्हें केवल टर्की से प्रेम था, इसलिए संस्था के एक के बाद दूसरे मेम्बरों में संघर्ष होता रहा। यहाँ तक कि मुस्तफ़ा कमाल निरुत्साह होकर संस्था से अलग हो गये और स्वयं अपनी योजना बनाने लगे। इसी बीच में सुख-शान्ति के समुद्र में क्रान्ति की लहरें उठने लगीं। एक तूफ़ान-सा उठ खड़ा हुआ। अनवर बे ने क्रान्ति की घोषणा कर दी। नियाज़ी ने विप्लव का झंडा ऊँचा किया। केवल मुस्तफ़ा कमाल चुप बैठे थे। यह राजनीतिज्ञ अग्रशोची था। योजना की भली प्रकार परीक्षा किये बिना पैर बढ़ाना और तात्कालिक उत्तेजना में आकर कोई कार्य कर बैठना उसके स्वभाव के विरुद्ध था। प्रत्यक्ष में अनवर बे सफल होते दिखाई दिये। इस संस्था को कुचलने के लिए सेना भेजी गई, जो संस्था के विचारों में रँगकर वह उसी से मिल गई। कई सैनिक टुकड़ियों ने आक्रमण करने से अस्वीकार कर दिया। सुलतान की सत्ता उस गृह के समान गिरती हुई प्रतीत होने लगी, जिसकी नींव न हो। ऐसी दशा में सुलतान ने कूटनीति से काम लिया और क्रान्तिकारियों का मन रखने के लिए शासन-पद्धति बदल दी। अनवर बे और नियाज़ी सफल होकर लौटे। शाही घोषणा

کشان کیا میں اتاترک کا مکان
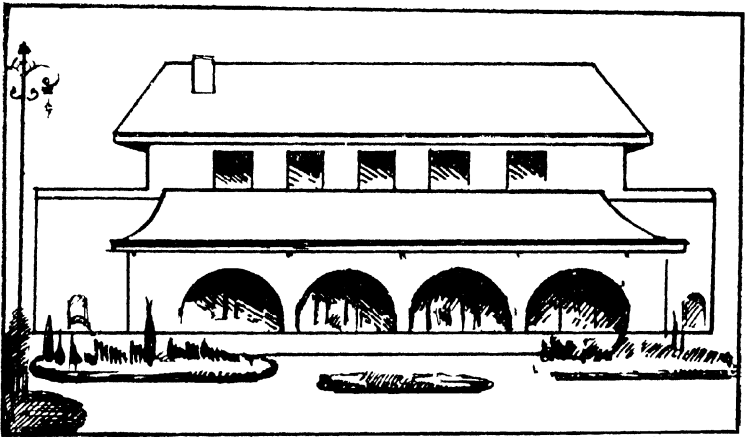
कुशानक्रिया में अतातुर्क का गृह

सुननेवालों में मुस्तफ़ा कमाल भी एक साधारण व्यक्ति के समान खड़े थे। घोषणा होते ही देशनिकाला किये हुए देश-प्रेमी लौट आये, और फिर टर्की एक उत्तम पथप्रदर्शक को चुनने के लिए चारों ओर देखने लगा। नेताओं के संघर्ष में नियाज़ी को मृत्यु के मुख में जाना पड़ा। चारों ओर एक हलचल-सी मच गई। सुल्तान ने अवसर से लाभ उठाकर इस्लाम की सहायता की आड़ में अपनी सेनाओं को दबा दिया। परन्तु अनवर बे ने देश में सुल्तान का बुरा प्रभाव न पड़ने दिया। इस समय मुस्तफ़ा कमाल सैनिक कार्य करने में लगे हुए थे। अनवर, जावेद, तलअत और जमाल मन्त्री थे, परन्तु मुस्तफ़ा कमाल को कोई विशेष ख्याति प्राप्त नहीं हुई थी। अनवर बे का सौभाग्य अपनी चरम सीमा पर था। उनका झुकाव जर्मनी की ओर था। देश में चारों ओर जर्मनों का प्रभाव बढ़ रहा था। मुस्तफ़ा कमाल को यह बात सह्य न थी। वह टर्की को विदेशी के हाथों में स्वाधीन करना चाहता था। युद्ध-मन्त्री शौकत पाशा मुस्तफ़ा कमाल के स्वभाव से परिचित थे। उन्होंने इस मतभेद को दबाने का प्रयत्न किया और मुस्तफ़ा कमाल को किसी एक स्थान पर न ठहरने दिया। फिर भी उनका उत्साह किसी प्रकार कम न हुआ।

अचानक अक्तूबर सन् १९११ में इटली ने उत्तरी आफ्रिका के नगर ट्रिपोली पर आक्रमण करके उसे जीत लिया।

मुस्तफ़ा कमाल ने सिंह की भाँति डट कर युद्ध किया। अब उनके लिए कार्य करने का समय आ गया था, परन्तु तुर्कों के पास जहाज़ी बेड़ा न था और सेना के जाने का मार्ग बन्द था। व्यक्तिगत रूप से मरने-मारनेवाले वहाँ पहुँचने का प्रयत्न करते रहे। फ़तही वे फ्रांस से होकर वहाँ पहुँच गये। अनवर बे आँधी की तरह मोर्चे पर जा डटे। मुस्तफ़ा कमाल भी थल-मार्ग से चल पड़े। परन्तु मिस्र की सीमा पर पहुँचकर ज्ञात हुआ कि ब्रिटेन ने मिस्र को तटस्थ देश बनाकर सेना के आने-जाने का मार्ग बन्द कर रखा है। मिस्र टर्की के अधीन था, परन्तु यहाँ परिस्थिति कुछ दूसरे ही रूप में दिखाई दी। कोई चारा न था, खून उबलकर रह गया। अरबी कपड़े पहने, परन्तु कठिनता यह थी कि वह अरबी-भाषा से भली भाँति परिचित न थे। नीली आँखों ने अलग चुगली खाई और वह अरब न समझे जा सके। उन्हें पकड़ने का हुक्म जारी हो चुका था। परन्तु भगवान् उनका रक्षक था। मिस्री अफ़सर तुर्कों से सहानुभूति रखता था। उसने एक दूसरे नीली आँखोंवाले यात्री को पकड़ लिया और मुस्तफ़ा कमाल को जाने दिया। ग़ाज़ी ऐनउल मंसूर पहुँच गये। यहाँ अनवर बे उपस्थित थे। उनके झंडे के नीचे हज़ारों वीर खड़े थे। परन्तु अफ़सरों की कमी थी, इसलिए मुस्तफ़ा कमाल का स्वागत किया गया। अनवर बे मुस्तफ़ा कमाल से आयु में एक वर्ष छोटे थे, परन्तु पद के विचार से

बड़े थे। दोनों स्वेच्छाचारी, कठोर स्वभाव, निडर और वीर थे। परन्तु इतना होते हुए भी, दोनों में बहुत अन्तर था। अनवर बे दूर की सोचते थे, मुस्तफ़ा कमाल हर चीज़ को बड़े ध्यान से देखते थे। अनवर बे चंचल थे; कमाल, गम्भीर और विचारशील थे। अनवर बे लम्बी-लम्बी बातें सोचते थे; कमाल के विचार एक सीमा के भीतर सीमित रहते थे। अनवर बे मुसलमानों पर जान देनेवाले थे और कमाल अपने देश के प्रेमी थे। परिणाम यह हुआ कि दोनों में मतभेद स्पष्ट रूप से प्रतीत होने लगा। युद्ध होता रहा। यहाँ तक कि अक्तूबर सन् १९१२ में मांटीनीग्रो ने स्वयं टर्की पर आक्रमण कर दिया और इसी भय को देखते हुए इटली से सन्धि हो गई।

जब मुस्तफ़ा कमाल स्वदेश लौटे तब उन्होंने देश को बड़ी शोचनीय दशा में देखा। तुर्कों की पराजय हो रही थी। उनकी मातृभूमि सलोनिका यूनानियों के अधिकार में आ चुका था। २५ हज़ार तुर्क कारावास की कठिनाइयाँ झेल रहे थे। बलगारिया ने कुस्तुन्तुनिया के द्वार पर अपना झंडा लगा रखा था। योरप के नक़शे में अब टर्की न रह गया था, केवल रऊफ़ बे हमीदिया जहाज़ द्वारा जहाँ-तहाँ आक्रमण कर रहे थे। परन्तु इस प्रकार के व्यक्तिगत प्रयत्न निष्फल सिद्ध हो रहे थे। कुस्तुन्तुनिया घायल सैनिकों का

अस्पताल बना हुआ था। चारों ओर संक्रामक रोगों का प्राबल्य था। अन्न की बहुत कमी थी। ऐसी भयंकर परिस्थिति में मुस्तफ़ा कमाल ने अपनी माता की सुध ली। ज्ञात हुआ कि वे मक़बूला के साथ एक सुरक्षित स्थान में हैं, परन्तु बूढ़ी होने के कारण निबल होती जा रही हैं। माता को कुस्तुन्तुनिया पहुँचाकर फ़ौजी दफ़्तर में हाज़िरी दी और तुरन्त ही गैलीपोली जाने का हुक्म मिल गया। अनवर बे भी वापस आ चुके थे। उन्होंने सैनिक कार्यों को सँभालना आरम्भ किया और युद्ध का मोर्चा स्थापित किया। मुस्तफ़ा कमाल फिर उनकी योजना से सहमत न हो सके। फिर भी अनवर बे उच्च पदाधिकारी थे और कमाल एक अधीनस्थ कर्मचारी थे। योजना पर कार्य किया गया, परन्तु सफलता न मिली। पराजित टर्की अभी अपने घावों की मरहमपट्टी में लगा हुआ था कि भाग्य ने पलटा खाया। विजयी देश आपस ही में लड़ने लगे। अनवर बे ने यह दशा देखकर आक्रमण कर दिया और एड्रियानोपल पर अधिकार कर लिया। मुस्तफ़ा कमाल इस युद्ध में आगे-आगे थे। सफलता ने मुस्तफ़ा कमाल को लेफ़्टिनेंट कर्नल के पद पर पहुँचा दिया।

इस विजय से अनवर बे के पैर और दृढ़ता से जम गये। उन्होंने एक जर्मन अफ़सर सेंडर्स को सैनिक संगठन के लिए नौकर रखा। मुस्तफ़ा कमाल ने इसका विरोध किया।

अनवर बे इसे सहन न कर सका और उनको टर्की का राजदूत बनाकर फ़्रांस भेज दिया। यहाँ मुस्तफ़ा कमाल ने नाचना सीखा। पाश्चात्य वातावरण उन पर अपना रंग जमा चुका था। इसी समय महायुद्ध के बादल आकाश में मँडराने लगे। उन्होंने दूरदर्शिता से काम लेते हुए यह सलाह दी कि टर्की को इस युद्ध में तटस्थ रहना चाहिए। परन्तु ऐसा न हो सका। टर्की ने जर्मनी का साथ दिया और मतभेद के होते हुए भी मुस्तफ़ा कमाल को युद्ध में मुख्य भाग लेना पड़ा। वह जर्मन अफ़सर सँडर्स के साथ ब्रिटेन की सेना का सामना करने के लिए गैलीपोली भेजे गये। सँडर्स आदमी को पहचानता था। उसने वीर लक्ष्य-भेदी सैनिक को पहचान लिया। गैलीपोली में सँडर्स का कार्य बहुत कठिन था। ५२ मील का लम्बा समुद्री तट और ब्रिटेन का प्रसिद्ध जहाज़ी बेड़ा, प्रत्येक स्थान पर आक्रमण हो सकता था। यद्यपि सँडर्स के पास ८० हज़ार सैनिक थे, परन्तु इतने लम्बे मोर्चे का प्रबन्ध करना हँसी-खेल न था। सँडर्स ने सेना को २०-२० हज़ार के चार भागों में बाँटा और एक भाग को मुस्तफ़ा कमालके सिपुर्द कर दिया। किन्तु अनवर बे की आज्ञा से विवश होकर सँडर्स ने उन्हें वहाँ से हटाकर मीडास के स्थान पर भेज दिया। इस परिवर्तन से मुस्तफ़ा कमाल को बहुत बुरा लगा, परन्तु देश-प्रेम और कर्त्तव्य-पालन की भावनाओं ने उन्हें किसी प्रकार का विद्रोह करने से रोक दिया।

२५ अप्रैल के प्रातःकाल को कोहरे के परदे की आड़ में ब्रिटेन का जहाज़ी बेड़ा चला और बिलियर के उत्तर में दिखाई दिया। यथार्थ में यह एक सैनिक चाल थी और सैंडर्स धोखे में आ गया। अँगरेज़ी अफ़सरों ने बीच तट पर आक्रमण करने का विचार किया था और भयंकर आक्रमण का लक्ष्य मीडास की ओर था। सैंडर्स ने धोखा खाकर अपनी शक्ति बिलियर की ओर भेज दी। एक दिन प्रातःकाल के समय मुस्तफ़ा कमाल क़वायद कर रहे थे कि कुछ तुर्कों ने सूचना दी कि अँगरेज़ों ने आक्रमण कर दिया है। उन्होंने तुरन्त ही परिस्थिति की गम्भीरता को समझ लिया। यदि आज्ञा की प्रतीक्षा करते तो बड़ी हानि होने की सम्भावना थी। कार्य बहुत ही महत्त्वपूर्ण था। शक्ति कम थी और भय बहुत था। मुस्तफ़ा कमाल को विश्वास था कि मुख्य आक्रमण यहीं होगा। वे सैंडर्स की त्रुटि पर हँसे और केवल २०० वीरों के साथ सामना करने के लिए चनक को चले गये। पहाड़ी पर पहुँचकर दम लिया। आस्ट्रेलियनों की ओर पहली तोप का गोला उन्होंने अपने हाथ से छोड़ा, और अपनी ज़िम्मेदारी पर गोलाबारी करने का आदेश दिया। इस कठिन काल में उनका उत्साह बहुत चढ़ा-बढ़ा था। दो दिन तक स्वयं अपनी देखभाल में लगातार आक्रमण किये। अँगरेज़ों को आश्चर्य था कि इस प्रकार रक्षात्मक युद्ध किस प्रकार सम्भव हो सका। इसका यह

फल निकला कि यद्यपि मुस्तफ़ा कमाल इस बड़ी सेना को पराजित करके समुद्र तक न हटा सके, तथापि मुट्ठी भर सिपाहियों ने हज़ारों को आगे बढ़ने से रोक दिया। एक तिनके की सहायता से बाढ़ को रोकना कमाल पाशा का ही कार्य था। उनका उत्साह बहुत चढ़ा-बढ़ा था। वे अपने देश की रक्षा कर रहे थे और किसी आदेश के आश्रित न थे। वे अच्छी तरह जानते थे कि हम क्या कर रहे हैं। उस स्थान पर तुर्कों की पराजय से दरें दानियाल और वहाँ से कुस्तुन्तुनिया का मार्ग अँगरेज़ों के लिए खुल जाता। शक्ति की परीक्षा हो चुकी थी। दोनों पक्ष एक दूसरे की शक्ति को देख चुके थे। दोनों ने खाइयाँ खोदकर अपने को सुरक्षित कर लिया और अवसर की प्रतीक्षा में बैठ गये। अँगरेज़ों को यह ज्ञात न था कि केवल २०० तुर्क उनका मार्ग रोके हुए हैं। भयंकर गर्मी पड़ने लगी, पानी मिलना कठिन हो गया, परन्तु वीर सैनिक अपने स्थान पर डटे रहे। मुस्तफ़ा कमाल ने कई रातें जागते काटीं। मैदान में सैनिकों ने अपनी वीरता दिखाई। आज वे दूसरे ही मुस्तफ़ा थे। प्रत्येक अधीनस्थ से बड़ी अच्छी तरह बात करते थे। प्रत्येक सैनिक का मन अपने वश किया और उनका उत्साह बढ़ाया। साधारण सैनिकों के साथ मिलकर आक्रमण करने में साथ दिया। बार-बार वे गोलियों के निशाने में आ जाते, परन्तु उन्होंने इसकी चिन्ता न की। वे एक समय खाई के

बाहर बैठे हुए कुछ सोच रहे थे कि तोपों के निशाने में आ गये। पैरों के पास गोलियाँ बरसने लगीं। एक अफ़सर ने बच निकलने का परामर्श दिया, परन्तु उन्होंने हँसकर उत्तर दिया कि भय के समय साथियों को छोड़कर अपनी रक्षा नहीं चाहते। और कहा कि मैं दूसरों के लिए बुरा उदाहरण न बनूँगा। सिगरेट जलाई और शान्ति के साथ पीने लगे। ऐसे अफ़सर की अधीनता में डरपोक से डरपोक सैनिक भी वीर बन गया।

तात्पर्य यह है कि बहुत समय तक दोनों पक्ष खाइयों में पड़े हुए अपनी रक्षा करते रहे। अगस्त का महीना आ गया। ६ अगस्त को अँधेरी रात में अँगरेज़ों ने १६००० सैनिक चुपके से उतार दिये। आस्ट्रेलियनों का उत्साह बढ़ा और वे पहाड़ी पर चढ़ने लगे। मुस्तफ़ा कमाल ने केवल २० सैनिकों को लेकर उनका सामना किया और इतनी भयं-कर गोलाबारी की कि शत्रु चकित हो गया। अब उनके पास भी कुछ और सेना आ गई थी। फिर क्या था, घमासान युद्ध होने लगा। स्वयं मुस्तफ़ा कमाल का खाई पर भी आक्रमण हुआ। सम्भव था, तुर्कों के पाँव उखड़ जाते, परन्तु कमाल के व्यक्तित्व ने सैनिकों के पाँव जहाँ के तहाँ गाड़ दिये। अँगरेज़ आगे न बढ़ सके। मुस्तफ़ा कमाल की वीरता और उनके सैनिकों का युद्ध देखकर सैंडर्स ने सारी सेना को कमाल की अधीनता में दे दिया और सहायता की

आशा लगाये रहा। मुस्तफ़ा कमाल को अपने कर्तव्यपालन का ध्यान था। उन्होंने चुपचाप उस भार को अपने ऊपर ले लिया और संगठन-कार्य में लग गये। भाग्य उनके साथ था और कमान मिलते ही नई सेना भी आ गई। संयोगवश अँगरेज़ी अफ़सर सर हैमिल्टन और मुस्तफ़ा कमाल ने एक ही साथ आक्रमण का आदेश दिया। दोनों सेनाएँ तैयार थीं, बड़ी घमासान लड़ाई हुई। अँगरेज़ फिर जहाँ थे, वहीं रह गये। चनकबियर में तुर्कों को सफलता मिल रही थी, परन्तु युद्ध अभी पलटे ही खा रहा था। तुर्क हिम्मत खो बैठे थे। इतने ही में चनकबियर से भी सूचना आई कि तुर्कों के पाँव उखड़ने ही वाले हैं। वीर मुस्तफ़ा कमाल ने अपनी आवश्यकता को समझा। केवल २४ घंटे का अवकाश लिया और ८ बजे रात को चनकबियर पहुँच गये। देखभाल करने पर पता चला कि परिस्थिति यथार्थ में बड़ी शोचनीय थी, परन्तु उनकी उपस्थिति ने मृतकों में प्राण डाल दिये। वे दो बार शत्रु की गोलियों का निशाना होते-होते बच गये। हितैषियों ने वहाँ से बच निकलने की सम्मति दी, परन्तु उन्होंने एक न सुनी। स्वयं शत्रु की सेना के समीप जाकर उन्होंने सारी परिस्थिति का अध्ययन किया और बड़ी शान्ति के साथ वहाँ से वापस आये। सारी रात उन्होंने सबको उत्साहित किया—

"देश के सपूतो, देश पर प्राण देने का समय है। देश

तुम्हारी ओर दृष्टि लगाये हुए हैं। चंचलता से काम न लेना, मेरी बाट जोहना। मैं उपयुक्त समय पर प्रकट हूँगा। मेरे हाथ उठने के लिए रुकना। हाथ उठने पर तेज़ संगीनें बन्दूकों पर हों और मिल-जुलकर धावा बोल देना।"

मुस्तफ़ा कमाल के भाषण ने तुर्कों में एक नया उत्साह भर दिया। हर एक मरने-मारने को तैयार हो गया। वह ऐसे वीर अफ़सर के साथ आग में भी कूद पड़ने थे। प्रातःकाल का नक्षत्र चमकने को था। तीन बजे मुस्तफ़ा कमाल खाई से निकले और आगे बढ़े। अँगरेज़ों ने गोलियों की बौछार शुरू कर दी। एक गोली घड़ी पर आकर लगी और उसे चकना-चूर कर दिया। अचानक गोलियों की बौछार कम हुई। वीर कमांडर एक मिनट तक चुप रहा। सैनिकों ने देखा कि धीरे-धीरे हाथ उठ रहा है। मुस्तफ़ा कमाल आगे बढ़े और तुर्कों ने एक युद्ध के नारे के साथ आक्रमण कर दिया। शत्रु की पंक्ति टूट गई। चनकवियर का आया हुआ भय दूर हो गया। अन्त में, दिसम्बर सन् १९१५ में, मुस्तफ़ा कमाल कुस्तुन्तुनिया लौट आये। समाचारपत्रों में उनकी धूम मच गई। प्रत्येक व्यक्ति की दृष्टि उन पर पड़ने लगी। अब वह पाशा कहलाने लगे।

अनवर बे अधिनायक बने हुए थे। चारों ओर जर्मनों का बोलबाला था। कमाल पाशा का ख़ून टर्कों की इस गुलामी पर उबल रहा था। अनवर बे के विरुद्ध षड्यन्त्र होने

लगे, परन्तु युद्ध उसी प्रकार चल रहा था। भारतीय सेना बगदाद को विजय कर चुकी थी। मूसल पर आक्रमण करने की तैयारी थी और फिलस्तीन व स्याम पर भी आक्रमण होनेवाला था। कमाल पाशा बीमार थे, परन्तु स्याम पहुँच गये। शरीर में शक्ति न थी, परन्तु निश्चय की दृढ़ता ने शारीरिक क्षीणता पर विजय पाई। १६ सितम्बर को आक्रमण हुआ और बड़ा भयंकर युद्ध हुआ। कमाल पाशा युद्ध करते हुए पीछे हटे। पाँचवें दिन पराजित सेना तितर-बितर हो चुकी थी। नदी को पार किया और स्वयं सबके बाद पार उतरे। वायुयानों ने आकाश से आग बरसाई। कर्नल लारेंस व अमीर फैसल ने सम्मुख से आक्रमण कर दिया। सेना नष्ट-भ्रष्ट हो गई, परन्तु देश-प्रेम की लहर कम न होने पाई। अन्त में टर्की ने सन्धि कर ली। कुस्तुन्तुनिया में सन्धिपत्र पर हस्ताक्षर हो गये। जर्मन अफ़सर वापस भेज दिये गये। टर्की पराजित देश था, परन्तु कमाल पाशा इसे मानने को तैयार न थे। सन्धि की शर्तों के अनुसार अँगरेज़ों ने एलेक्ज़ेंड्रा पर अधिकार करना चाहा, परन्तु कमाल पाशा ने इसमें रुकावट डाली। प्रधान मन्त्री इज़्ज़त पाशा को तार दिया कि पैरों पर नाक रगड़ने से मर जाना कहीं अच्छा है। वे सेना संगठित करने लगे। अनवर, तिलअत और जमाल भाग चुके थे। अकेले ही उन्होंने निश्चय किया कि देश को आँच न आने देंगे। बासफ़ोरस पर यूनियन जैक लहरा रहा

था। कुस्तुन्तुनिया मित्रराष्ट्रों के अधिकार में आ चुका था। इस्तमबोल पर फ्रांसीसियों का अधिकार था। उस्मानी सत्ता की दुर्गति हो चुकी थी। मिस्र, स्याम, फ़िलस्तीन और अरब, उस्मानी साम्राज्य से पृथक् हो चुके थे। स्वयं टर्की शत्रुओं के चक्र में फँसा हुआ था। परन्तु कमाल पाशा ने निश्चय कर लिया था कि टर्की को मटियामेट न होने दिया जायगा। दूसरे से सहायता पाने की आशा करना भी व्यर्थ है। स्वयं टर्की को अपने पैरों पर खड़ा होना चाहिए। निर्बल होते हुए भी आज कमाल पाशा के स्वर में जोश था। तुर्कों की दृष्टि गैलीपोली के वीर की ओर उठी। सेना एकत्रित होने लगी। अँगरेज़ों के पास भयंकर व्यक्तियों की जो सूची थी, उसमें कमाल पाशा का नाम सबसे पहले लिखा हुआ था। हर समय पकड़े जाने का भय था, परन्तु वे बिलकुल निडर बने हुए थे। प्रधान मन्त्री ने व्यक्तिगत ज़मानत का और अनातोलिया का हाकिम बनाकर भेज दिया। १६ मई, सन् १९१९ को समसम बन्दरगाह पर जहाज़ ने लंगर डाला। यह स्थान ब्रिटेन के गुप्तचरों का केन्द्र था। परन्तु कमाल पाशा ने इसकी ओर ध्यान न दिया। उन्होंने देश का भ्रमण करके अँगरेज़ों के विरुद्ध लोगों को भड़काया; देश-प्रेम की भावनाओं को जगाया। अचानक सूचना मिली कि आरमीनियों ने अरज़म पर अधिकार कर लिया है। यूनानियों से स्मर्ना ले लिया और असंख्य तुर्कों को तलवार के घाट

उतार दिया। आग भड़क उठी, घृणा के भाव जागृत हो गये। कमाल पाशा ने अपनी ओर से आदेश दे दिया कि हथियार न डाले जायँ। विजयी ब्रिटेन ने सुल्तान से शिकायत की। सुल्तान ने कमाल पाशा को बुलाया, परन्तु उन्होंने इस पर कोई ध्यान न दिया और कहला दिया कि जब तक मेरा देश स्वाधीन न हो जायगा, तब तक मैं यहीं रहूँगा। आज कमाल पाशा विद्रोही थे तथा चनकबियर और मीडास के विजयी के लिए गिरफ़्तारी का वारंट जारी था।

देश कांग्रेस की तैयारी में व्यस्त था। प्रतिनिधि आ रहे थे। कमाल पाशा भी अरज़म की ओर से प्रतिनिधित्व कर रहे थे। कांग्रेस एकत्र हुई। देश की सरकार को इस प्रकार एकत्र होना भयप्रद मालूम हुआ। सब लोगों को पकड़ लेने के लिए सेना भेजी गई। कांग्रेस के लोगों ने सामना किया और सेना हार गई। कमाल पाशा कांग्रेस की प्रबन्धकारिणी समिति के सभापति नियुक्त हुए। उन्होंने अपना दफ़्तर अंगोरा में स्थापित किया, जनवरी सन् १९२० में नई सत्ता की नींव डाली और सभापति की हैसियत से सन्धिपत्र पर हस्ताक्षर न किये। वह राजतन्त्र सरकार के विद्रोही थे, परन्तु प्रजातन्त्र सरकार के सभापति थे। गुर्दे की पीड़ा सता रही थी। चारों ओर का वातावरण ख़राब था। स्वास्थ्य गिर गया था। मृत्यु हर समय मुँह बाये खड़ी थी। परन्तु शय्या पर पड़े-पड़े मरना एक सैनिक के लिए शोभा की बात न थी। उन्हें अपना देश

अपने प्राणों से अधिक प्रिय था। सरकार का विद्रोही, देश का सेवक, खेती-बारी के कालेज के एक कमरे में खानिदा अदीब खानम के साथ देश-सेवा में लगा हुआ था। वह अपनी प्रत्येक साँस को देश के हाथों बेच चुका था। खेती-बारी का कालेज एक प्रकार से उसका कारागृह था। अदीब खानम ने पिस्तौल चलाना सीखा। उसका पति हर समय अपने पास विष रखता था। कहने का तात्पर्य यह है कि दोनों मृत्यु से खेल रहे थे। दिन-रात भाषणों और लेखों से लोगों में जोश पैदा किया। जाति को विजय या मृत्यु का सन्देश दिया और तुर्कों को सोते से जगाया। एक ओर सुल्तान की सेनाओं को हराया, दूसरी ओर इटली को नीचा दिखाया। यूनानियों को पराजित किया, अँगरेज़ों को पीछे हटने पर बाध्य किया। ऐसे वीर कमाल का नाम बच्चे-बच्चे की जिह्वा पर था। इस समय वे टर्की के प्रजातन्त्र राज्य के प्रेसीडेंट थे, और इसी हैसियत से उन्होंने फ्रांस को लिखकर भेज दिया—

"जब तक देश शत्रुओं के हाथ में है और सुल्तान दूसरों के चंगुल में फँसा हुआ है तब तक यह राष्ट्रीय संस्था तुर्कों के भाग्य का निर्णय करेगी। यही संस्था राष्ट्र की भाषा है, राष्ट्र ही स्वयं अपना शासक है और मुझे राष्ट्र की ओर से बोलने का अधिकार है।"

वे बहुधा कहा करते थे कि मुझे पाश्चात्य राष्ट्रों को

शिक्षा देनी है कि वे हमें अपने बराबर समझें। मित्रराष्ट्रों के मुख्य नेताओं के विचार से टर्की का अन्त कर दिया गया था। स्मर्ना को छोड़कर शेष अनातोलिया ही तुर्कों के अधिकार में था। बचा हुआ देश विभाजित हो चुका था। टर्की को सेना रखने का अधिकार न था। प्रत्येक विभाग में विजयी घुसे हुए थे। टर्की सिसकियाँ ले रहा था, परन्तु कमाल पाशा के कारण निर्बल से निर्बल तुर्क बलवान् हो गया। ५०० वर्ष शासन करने के बाद आज टर्की की दशा इतनी शोचनीय हो चुकी थी कि वह विजयी के सामने माथा टेकने को तैयार था। तुर्कों ने देश की दीन दशा देखकर आपसी झगड़ों को तिलांजलि दे दी। अभी मित्र-राष्ट्र पेरिस में थे कि उन्होंने आश्चर्यजनक सूचना सुनी कि पराजित दुर्बल मुट्ठी भर तुर्कों ने मित्रराष्ट्रों की शक्ति को नष्ट-भ्रष्ट कर दिया है।

यूनानियों को लालच दिलाया गया कि वे देशों को जीतें। एक बार फिर टर्की पर भय के मेघ मँडराने लगे। टर्की हर प्रकार से अशक्त था। संसार में निराशा थी, परन्तु कमाल के हृदय सागर में आशा की लहरें उठ रही थीं। उन्हें अपने देश और भाइयों से बड़ी आशा थी। राष्ट्रीय संस्था के सामने उपस्थित हुए। देश की दुर्दशा का चित्र खींचा। हृदय के उद्गार मुख से निकल रहे थे। शरीर का रक्त उनके स्वर को उच्च कर रहा था। उन्होंने कहा कि टर्की

और यूनान के पैरों पर अपना सिर रखे! यह कदापि नहीं हो सकता। तुर्कों को जोश आया। निराशाओं में घिरकर कमाल पाशा और अधिक शान्त व गम्भीर हो गये। वे तुर्क, जो कठिनाइयों के पहाड़ उठा चुके थे। आरम्भ में किसी बात पर तैयार होते नहीं दिखाई दे रहे थे, परन्तु धीरे-धीरे प्रभाव फैलता गया और भाषण पूरा होते-होते प्रत्येक व्यक्ति उन्हीं के से विचार रखने लगा। गैलीपोली के महान् वीर ने तुर्कों में एक नई जान फूँकते हुए कहा—

"तुर्क और दास, अरब निकल जाय स्याम छिन जाय, इस्लामी साम्राज्य के टुकड़े-टुकड़े हो जायँ, परन्तु टर्की अपनी सहायता स्वयं करेगा। टर्की स्वाधीन रहेगा।"

सेना तैयार की गई और कमाल पाशा के अथक प्रयत्न सफल हुए। कठिन परिश्रम ने उन्हें रोगी बना दिया। केवल फ़ख़रिया ख़ानम की सेवा ही उन्हें रोग-मुक्त कर सकी। फ़ख़रिया ख़ानम उनकी सम्बन्धी थी। घर का प्रबन्ध देखना आरम्भ किया। कमरे सजाये, बाग़ को हरा-भरा किया, मकान को फूलों से और उसके कोने को अपनी सुघरता से सुसज्जित कर दिया। दोनों एक दूसरे की ओर आकृष्ट हुए, परन्तु कमाल पाशा प्रेम के दास न थे। उन्होंने जल्दी ही फ़ख़रिया को भुला दिया।

राष्ट्रीय संस्था ने कमाल पाशा को प्रधान सेनापति और अस्थायी अधिनायक बना दिया। रोगी होते हुए भी, वे

तैयारियाँ करते रहे। घोड़े से गिर जाने के कारण एक पसली भी टूट गई, परन्तु कठिन परिश्रम करते रहे। युद्ध के मोर्चे पर जा पहुँचे। दो सप्ताह एक लगातार युद्ध होता रहा। उन्हें एक क्षण के लिए भी वर्दी उतारना नसीब न हुआ। कठिनता से खाने और सोने का समय मिलता था। दो सप्ताह के बाद दोनों सेनाएँ थक चुकी थीं। चलने-फिरने से टूटी हुई पसली में असह्य पीड़ा होती थी। वह अभी यह सोच ही रहे थे कि कुछ पीछे हटकर क्यों न युद्ध किया जाय कि टेलीफ़ोन की घंटी बजी, सूचना सुनी और मुस्करा दिये। यूनानी स्वयं ही विचलित होकर पीछे हट रहे थे। लँगड़ाते हुए दफ़्तर पहुँचे। क़हवा मँगाया और आक्रमण का आदेश दे दिया। सात दिन तक भीषण युद्ध हुआ। कमाल पाशा रोगी होते हुए भी युद्ध में भाग ले रहे थे। आसपास सैनिक गोलियाँ खा-खाकर गिर रहे थे, परन्तु कमाल पाशा सुरक्षित थे। २२वें दिन यूनानी पीछे हटे। उनका पीछे हटना था कि धूम मच गई। रूस, फ़्रांस, इटली, अफ़ग़ानिस्तान और हिन्दुस्तान—हर देश से बधाई के तार आने लगे। टर्की ने अपने वीर का बड़ा ही मान-सम्मान किया।

परन्तु कमाल पाशा बधाई के तारों की ओर ध्यान देने-वाले न थे। वे जानते थे कि अभी उन्हें बहुत कुछ करना है। दिन-रात परिश्रम करके नई सेना तैयार की और गुप्त रूप से मोर्चे पर भेज दी। २६ अगस्त, सन् १६२२ की रात

को नाच का प्रबन्ध किया। ज़ुबैदा और फ़ख़रिया किसी को ज्ञान न था कि क्या होनेवाला है। संसार को अपनी शान्ति और स्थिरता का परिचय देना और यूनानियों को धोखा देना था। सारा प्रबन्ध ठीक था। घड़ी ने १२ बजाये। एक सेकंड के लिए नाच बन्द हुआ और हुक्म दिया—"वीरो, दृष्टि तट पर रहे, इधर न रुकना।" चार बजे यूनानियों पर आक्रमण हो गया। दोपहर तक यूनानियों की आधी सेना मौत के घाट उतर चुकी थी। यूनानी पीछे हटे। दस दिन तक वे १६० मील भागकर पीछे आये। तुर्क लगातार पीछा करते रहे, यहाँ तक कि यूनानियों ने देश छोड़ दिया। स्मर्ना पुनः तुर्कों के अधिकार में आ गया। कमाल पाशा ने बड़े राजसी ठाट-बाट से स्मर्ना में प्रवेश किया। शहर से मीलों पहले सुसज्जित मोटरों की पंक्तियाँ खड़ी थीं। सड़क के दोनों ओर हँसते, मुस्कराते और खिले हुए चेहरों की दीवारें दिखाई दे रही थीं। कमाल पाशा स्मर्ना के फाटक पर उतरे। घोड़ा लिया- सेना ने नंगी तलवारों से अभिवादन किया। चंचल व तेज़ घोड़ों की पंक्ति चली। कमाल पाशा इन सबमें आगे-आगे थे। टर्की को स्वाधीन करनेवाला नगर में प्रवेश कर रहा था। भीड़ खुशी से फूली न समा रही थी। मनुष्यों के हृदय उनके वश में न थे। "कमाल पाशा ज़िन्दाबाद" के नारों से आकाश गूँज रहा था।

तुर्की सरदार ने विजय पाई थी और सारे शत्रु एक-एक करके पराजित हो चुके थे। यह सफलता केवल कमाल पाशा के साहस, बुद्धिमत्ता और दूरदर्शिता के कारण मिली। परन्तु ग़ाज़ी में घमंड नाम को भी न था। टर्की की विजय तुर्कों के कारण हुई। परन्तु इस विजय को अमर बना देना कमाल पाशा का ही काम था। धीरे-धीरे वे टर्की के अधिनायक हो गये। उन पर दो बार आक्रमण हुए और दोनों बार उन्हें नया जीवन मिला। वे तुर्कों को अपना भाई और प्रजा को अपनी सन्तान समझते थे। उन्हें अभी देश मे सुधार करके संसार के सामने एक उदाहरण के रूप में रखना था। वेष-भूषा, स्वभाव, बातचीत का ढंग और उठने-बैठने के तरीक़ों में उन्हें देश को सुधारना था। उन्होंने क़ानून बदले, इटली के ताजीरात क़ानून, जर्मनी के तिजारती क़ानून और स्विट्ज़रलैंड के दीवानी क़ानून लागू किये। परदे की प्रथा उठा दी, बहुविवाह के विरुद्ध क़ानून पास कर दिया। हर चीज़ तुर्की भाषा में कर दी। तुर्की साहित्य से अरबी, फ़ारसी और तातारी के शब्द निकाल दिये। स्टाम्प पर टर्की का पुराना चिह्न "गुर्ग" का चित्र छपवाकर तुर्कों को देश-प्रेम की याद दिलाई। विदेशी प्रभाव को दूर कर दिया। टर्की में केवल टर्की की बनी हुई वस्तुओं को स्थान दिया। शुक्रवार को छुट्टी का दिन माना गया। कैलेंडर वर्ष प्रचलित किया। भीख माँगना बन्द करा दिया।

किसी दुखी के ऊपर हँसना दंडनीय अपराध घोषित कर दिया। तात्पर्य यह है कि जीवन के हर पहलू की छानबीन करके, उसमें हज़ारों परिवर्तन कर दिये। और नवीन टर्की को संसार के सामने रख दिया।

भारतवर्ष के मुसलमानों के एक डेपुटेशन ने एक बार ख़लीफ़ा हो जाने की प्रार्थना की, परन्तु कमाल पाशा ने स्पष्ट रूप से अस्वीकार कर दिया कि बनावटी ख़लीफ़ा बनने से कोई लाभ नहीं। क्या भारत के मुसलमान उसका हुक्म मानने के लिए तैयार रहेंगे? उक्त डेपुटेशन चुप होकर रह गया। उन्होंने केवल टर्की के लिए अपने को समर्पित कर दिया था। उनके कोई सन्तान न थी, कोई परिवार न था। उनकी दृष्टि में उनका देश ही उनका परिवार था और उनका देश टर्की ही उनकी थोड़ी सी निजी सम्पत्ति का स्वामी था। युवा-काल समाप्त हो चुका था। ५० वर्ष से भी अधिक आयु हो चुकी थी, परन्तु वे अभी परिश्रम उसी प्रकार करते रहते थे। एक बार लगातार सात रातें जागकर एक भाषण तैयार किया और लगातार छः दिन तक भाषण देते रहे। परन्तु स्वर में न तो कोई उतार-चढ़ाव आया और न किसी प्रकार की थकावट ही ज्ञात हुई। सचमुच देश को ऐसा सच्चा सेवक बड़े सौभाग्य से मिलता है। उनकी प्रत्येक साँस में देश की आवाज़ आती थी। टर्की के इतिहास में उनका नाम सदैव अमर रहेगा।
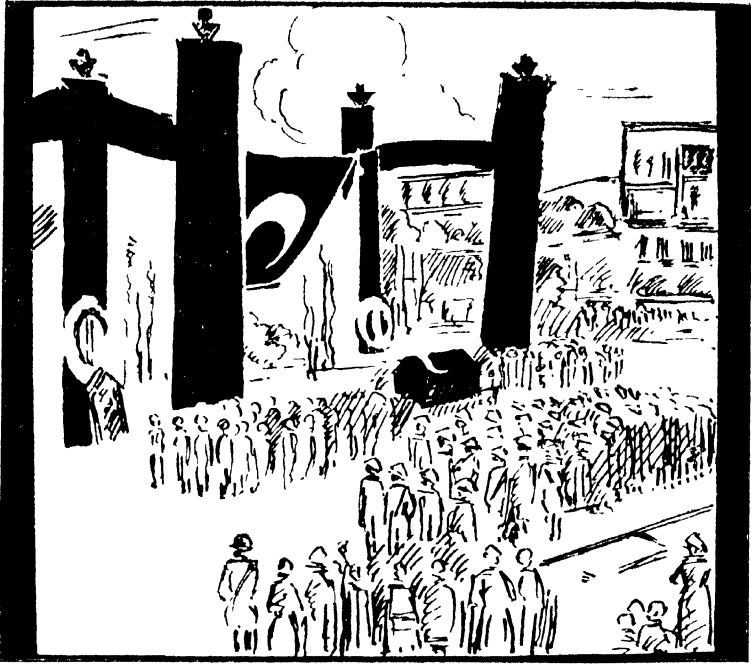
اتا ترک کے جنازہ کا جلوس قسطنطنیہ میں

कुस्तुन्तुनिया में अतातुर्क के शव के साथ जन-समूह

कमाल पाशा के एक भाषण से विदित होता है कि वे राष्ट्रीय भावना और अपनी महत्ता से पूर्ण रूप से परिचित थे। भाषण देते हुए उन्होंने कहा—"इस समय टर्की में दो मुस्तफ़ा कमाल हैं—एक वह जो मनुष्य के रूप में आपके सामने उपस्थित है और एक दिन मिट जायगा, परन्तु दूसरा मुस्तफ़ा कमाल मुझसे भिन्न है और वह अमर रहेगा। यह कमाल आप और आपका लक्ष्य है, वह लक्ष्य जिसे लेकर आप देश के कोने-कोने में जाते हैं जिससे लोग उसे समझें और प्राप्त करने का प्रयत्न करें। मैंने अपना जीवन आपके लक्ष्य की पूर्ति के लिए समर्पित कर दिया है। मेरे जीवन का मुख्य उद्देश्य यह है कि आपके सुनहरे स्वप्न असत्य सिद्ध न हों।"

टर्की के इतिहास में यही प्रथम अवसर न था, जब कि एक महती क्रान्ति का भार केवल एक ही व्यक्ति पर रहा हो। एक लेखक का कहना है कि प्राच्य जातियाँ एक अकेले व्यक्ति को अपनी नाव का खेवनहार बनाती चली आई हैं। परन्तु इसमें मुख्य त्रुटि यह है कि उस आत्मा के न रहने पर बिलकुल बेकार हो जाती हैं। सन् १९२६ के बाद टर्की में जो-जो परिवर्तन हुए, उनका आरम्भ कमाल पाशा ही ने किया और अपने १५ वर्ष के सभापतित्व-काल में वे बराबर तन-मन से इस प्रयत्न में लगे रहे। यदि कमाल पाशा के कार्यों के बारे में यह भविष्यवाणी की जाय कि उनकी भी

वही दशा होगी जो उनके पूर्ववर्ती सुधारकों की हुई तो इसे कोई भी बुद्धिमान् व्यक्ति स्वीकार करने को तैयार न होगा क्योंकि एक तो वे समय के साथ चले—उन्होंने मनुष्य-स्वभाव का भली भाँति अध्ययन किया और फिर उसी के अनुसार अपने देश में सुधार भी किये। कमाल पाशा को देश की यथार्थ दशा का ज्ञान प्राप्त करने में शैशव और युवा-काल के अनुभवों से बड़ी सहायता मिली। इसके अतिरिक्त उन्होंने नौजवान तुर्कों के समय की भूलों को भी अपने सामने रखा।

कमाल पाशा १० नवम्बर, सन् १९३८ को इस असार संसार को छोड़कर, परलोक-वासी हुए। इस शोकपूर्ण घटना ने तुर्कों पर दुःख का पहाड़ गिरा दिया। उन्होंने अपने इस प्रिय नेता की मृत्यु का जिस तत्परता और सत्यता से शोक मनाया, उसका उदाहरण वर्तमान इतिहास में मिलना कठिन है। अर्थी को देखकर स्त्रियाँ मूर्च्छित होकर गिर पड़ीं। पुरुष और बालक बिलख-बिलखकर रोने लगे। एक वर्ष बाद उनकी वर्षी भी इसी प्रकार से मनाई गई कि देखनेवाले दंग रह गये। इस अवसर पर एक बार फिर सारी जाति ने अपने प्रिय नेता की समाधि पर दिल खोलकर प्रेम के आँसू बहाये।

कमाल पाशा नवीन क्रान्ति के नेता और नींव डालनेवाले होने के अतिरिक्त उसके प्राण भी थे। उनकी लोकप्रियता

انقرہ میں اتا ترک کا آخری آرمگاہ
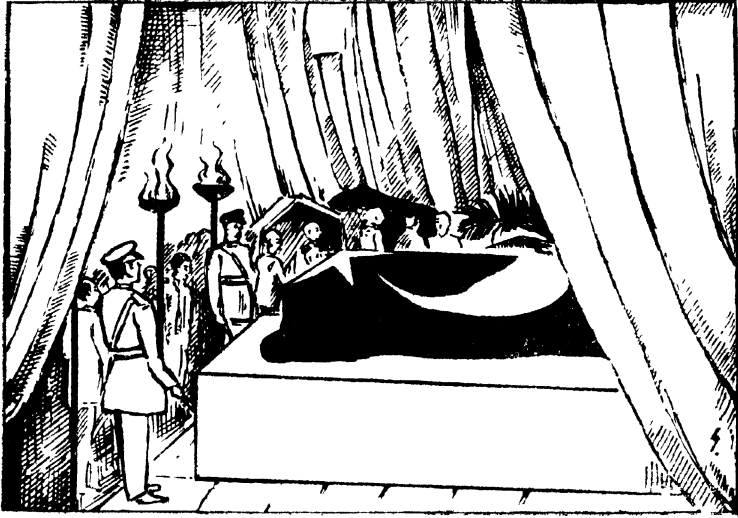
**अंकारा में अतातुर्क की अन्तिम समाधि**

का कारण यह था कि वे तुरन्त ही हर बात की गहराई तक पहुँच जाते थे। कठिन से कठिन समस्याओं को सुलझा लेना उनके लिए एक साधारण बात थी। आरम्भ ही से तुर्कों को सांसारिक उन्नति की उच्चतम सीढ़ी तक पहुँचाने की बलवती इच्छा अग्नि के समान उनके हृदय में सुलग रही थी। धर्म में भी उनकी श्रद्धा थी, परन्तु इस सीमा तक नहीं कि वह उन्नति के मार्ग में कंटक बन जाय। यदि यह कहा जाय कि तुर्कों के देश-प्रेम ने प्राचीन टर्की को नवीन टर्की बनाया तो इस बात को भी मानना पड़ेगा कि कमाल पाशा ने ही अपने अथक प्रयत्नों और लगातार परिश्रम से तुर्कों में देश-प्रेम की भावनाएँ जागृत कीं।

---

## अध्याय ६

## स्वाधीनता का युद्ध

स्वाधीनता के युद्ध से पूर्व तुर्क देश-प्रेम के बारे में स्पष्ट रूप से यह न समझ सके थे कि इसमें विस्तार करने की भी योग्यता है या नहीं अथवा उनका यह देश-प्रेम केवल टर्की तक ही सीमित है जो तुर्की भाषा बोलनेवाले समस्त रूसियों और उन साम्राज्यवादियों को अपने प्रभाव में लेना चाहता है जो देश-प्रेम का सहारा लेकर वर्तमान उस्मानी राज्य में तुर्कों की नेतागिरी स्थापित करना चाहते हैं, या यह कमाल

पाशा की नवीनता है और वह दूसरी जातियों को छोड़कर केवल अनातोलिया के ही तुर्कों में राष्ट्रीयता और देश-प्रेम का मन्त्र फूँकना चाहते हैं। कमाल पाशा को साम्राज्यवाद की सैद्धान्तिक दुर्बलताओं का समय-समय पर आभास हुआ। एक तो उस समय जब दरूज़ जाति ने दमिश्क़ के समीप सुल्तान के विरुद्ध विद्रोह किया। दूसरे, जब मक़दूनिया के निवासियों ने सालोनिका के प्रान्त में उस्मानी साम्राज्यवाद के विरुद्ध आन्दोलन उठाया। तीसरे, जब ट्रिपोली के तपते हुए तट पर इटालियन आक्रमणकारियों के विरुद्ध अरबों की रक्षा करनी पड़ी। चौथे, उस समय जब एड्रियानोपल के दुर्ग के सामने बल्कान के उन ईसाइयों को पीछे हटने पर बाध्य किया गया, जो आपस में मिलकर तुर्कों को यूनान से निकालने का दृढ़ संकल्प कर चुके थे। पाँचवें, जब पूर्वी सीमा पर अप्रसन्न अरमीनी अल्पसंख्यकों का विद्रोह दबाना पड़ा और छठे, जब अरब आक्रमणकारियों के सामने पीछे हटना पड़ा। इस प्रश्न पर कमाल पाशा की तीव्र दृष्टि वहाँ तक पहुँची जहाँ अभी तक उनसे पहले के या उनके समकालीन किसी नेता की नहीं पहुँची थी। वे भली भाँति समझ गये कि उस्मानी साम्राज्य के ढहते हुए भवन की रक्षा करने का प्रयत्न करना निरर्थक है; क्योंकि इस प्रकार लड़ाई-झगड़े बराबर होते रहेंगे और टर्कों के दुःखों में दिन-प्रतिदिन वृद्धि होती जायगी। उनका

विश्वास था कि जब तक तुर्क देश-प्रेम का मुख्य ध्येय यह न समझ लें कि सारी तुर्क जाति एक राष्ट्रीय सत्ता के अधीन पूर्ण रूप से संगठित हो जाय, तब तक तुर्कों का भविष्य उज्ज्वल नहीं हो सकता।

परन्तु कमाल पाशा ने अपनी लम्बी-चौड़ी यात्राओं और बड़े-बड़े आक्रमणों से केवल इतना ही नहीं सीखा, बल्कि एकता और उन्नति की संस्था के अनुभव से यह भी ज्ञात हुआ कि उस्मानी साम्राज्य की वर्तमान संस्थाओं में केवल साधारण सुधार कर देने से देश में उन्नति नहीं हो सकती। सन् १६२० में जब सुलतान तथा एकता और उन्नति की संस्था ने कुछ शर्तों के साथ विजयी मित्रराष्ट्रों की अधीनता स्वीकार कर ली तब कमाल पाशा का यह विश्वास और दृढ़ हो गया और वे इस ओर झुक गये। इसके अतिरिक्त तुर्क-सेना का कुप्रबन्ध, रसद-विभाग का न होना, चिकित्सा का कोई प्रबन्ध न होना, केन्द्र-स्थान के कर्मचारियों की अयोग्यता और उच्च पदाधिकारियों की अनुभवहीनता और उनका उत्तरदायित्व रूप से कार्य न करना—इन सब बातों को देखकर उन्हें स्पष्ट रूप से ज्ञात हो गया कि अवनति के इन्हीं कीड़ों ने उस्मानी साम्राज्य की जड़ें खोखली कर दी हैं और यही वर्तमान राजनैतिक और आर्थिक प्रबन्ध की दुर्बलताओं का स्पष्ट प्रमाण है। टर्की के सैनिक, राजनैतिक और प्रबन्ध-कार्य की त्रुटियों को देखकर उनका यह विचार

और भी दृढ़ हो गया कि प्राचीन प्रबन्ध-प्रणाली में नवीन सुधार करना असम्भव है।

इसके अतिरिक्त तुर्क सैनिकों की वीरता, उनके रंग-ढंग और धैर्य ने भी कमाल पाशा के हृदय में प्रजातन्त्र के लिए इतना उत्साह भर दिया कि यदि वे वर्षों फ्रांस की स्वाधीनता के बारे में अध्ययन करते तब भी उनके हृदय में इतना साहस कदापि न होता। जब वे यह विचार करते थे कि अनातोलिया के सपूतों ने सैकड़ों वर्ष तक मालगुज़ारी और टैक्सों की भरमार अथवा बन्दूक़ों के रूप में सुलतानों की राजसी त्रुटियों का भार शान्तिपूर्वक सहन किया है तब उनका हृदय बहुत व्याकुल हो जाता था।

केवल इतना ही नहीं, बल्कि जर्मनी और उसके साथियों और मित्रराष्ट्र के मेलजोल से उनमें देश-प्रेम की भावनाएँ एक रोग के समान बढ़ गई थीं। इस प्रकार सन् १९१८ की शरद्‌ऋतु में जब वे कुस्तुन्तुनिया लौट आये तब उनका मस्तिष्क नई वस्तुओं से भर चुका था। वे टर्की में एक ऐसा स्वतन्त्र प्रजातन्त्र राज्य स्थापित करना चाहते थे जो सिर से पैर तक नये रंग में डूबा हुआ हो, विदेशी प्रभाव से अलग हो और जिसका लक्ष्य केवल यही हो कि अनातोलिया के तुर्कों की भलाई किस प्रकार हो। इस समय उन्होंने राजधानी के लोगों को उत्साहहीन और निराश पाया। मित्रराष्ट्र अभी वार्सेली के स्थान पर दूसरे बड़े-बड़े राष्ट्रों के

भाग्य का निबटारा करने में लगे हुए थे। लाचार होकर टर्की अस्थायी सन्धि की शर्तों को पूरा कर रहा था। मित्रराष्ट्रों की सेनाएँ इस समय भी टर्की में उपस्थित थीं और उनका वहाँ रहना टर्की के भविष्य के लिए शुभ लक्षण न था। सुल्तान भी हिम्मत खो चुके थे, इसलिए कमाल पाशा ने अपना एक नया मार्ग पकड़ा। १६ मई सन् १६१६ को वे टर्की के भीतरी भाग के इंसपेक्टर जनरल नियुक्त हो गये।

लगभग उसी समय यूनानी सेनाएँ देखने में तो इस प्रान्त की रक्षा करने के लिए थीं, परन्तु यथार्थ में उसको यूनानी साम्राज्य में सम्मिलित करने के अभिप्राय से स्मर्ना में उतरीं। अँगरेज़ों और फ्रांसीसियों ने गुप्त रूप से उनको इस बात की आज्ञा इसलिए दे दी थी कि एजियन सागर के तट पर इटालियनों का अधिकार न होने पाये; क्योंकि वे अनातोलिया के समीपवर्ती भूमध्यसागर के तट पर पहले ही से अधिकार जमाये हुए थे और सेंट जेन डी मोरेन की गुप्त सन्धि के अनुसार स्मर्ना के प्रान्त को भी अपनी मिल्कियत समझते थे। यही अकेला एक ऐसा उदाहरण है जिसके आधार पर हम यह कह सकते हैं कि मित्रराष्ट्रों ने टर्की की दुर्दशा से लाभ उठाने के लिए उसके विरुद्ध षड्यन्त्र किया। परन्तु यूनान एक बड़ी शक्ति न थी और तुर्क उसको अपना कट्टर शत्रु समझते थे, इसलिए यूनानी सेना के उतरते ही तुर्कों को भय से अधिक अपने अपमान का विचार हुआ।

यदि कोई व्यक्ति यह विचार करे कि जब कमाल पाशा ने इस्तमबोल को छोड़ा तो तुर्कों में इतना उत्साह उत्पन्न हो चुका था कि वे उन्हें अपना नेता मानने और विदेशियों की दासता से मुक्त होने के लिए कटिबद्ध थे तो उसका यह विचार भ्रमपूर्ण है; क्योंकि कमाल पाशा को साम्प्रदायिक विचार रखनेवालों को भी अपने विचारों से सहमत कराना पड़ा। देश के भीतर अनातोलिया के निवासियों के रक्षात्मक अधिकारों की एक पृथक् संस्था बन चुकी थी, जिसने परीक्षा लेने के बाद कमाल पाशा को अपना नेता स्वीकार किया। अनातुर्क के सामने देश-प्रेमियों के भ्रमों को दूर करने से भी अधिक कठिन कार्य तुर्कों की अज्ञानता को दूर करना था। अनातोलिया के निवासी सैकड़ों वर्ष से कुचले जा रहे थे और उस्मानी शासन-काल में उनका कोई पूछनेवाला न था। अभी तक उन्हें कोई ऐसा नेता भी न मिला था जो उनके मृतप्राय हृदयों में उत्साह भरकर उन्हें कार्य करने पर उद्यत करता। उस्मानी सुलतान उन पर टैक्सों की भरमार करना और उनके नौजवान बेटों को बलात् सेना में भर्ती करना तो खूब जानते थे, परन्तु उनकी उन्नति और भलाई से उन्हें कोई लगाव न था। इस पर भी सुलतान, शासन और जाति स्वयं ही ठीक प्रकार की संस्थाएँ स्थापित न होने देती थीं। ऐसी दशा में राष्ट्र के भीतर देश-प्रेम और जीवन-दान करने की भावना उत्पन्न भी होती तो किस प्रकार होती। यह

सत्य है कि सन् १९०८ से देश-प्रेमी गाँव-गाँव जाकर लोगों को टर्की के गृह-आन्दोलन का संदेश पहुँचा रहे थे। परन्तु युद्ध और बाद में उसके परिणामों ने बीच में आकर इस क्रम को भी नष्ट कर दिया। तुर्क, जिनमें युद्ध से भागे हुए ५० प्रतिशत लोग भी थे, झुंडों में पीछे के प्रान्तों में भागे चले आ रहे थे। ये लोग युद्ध से इतने मर चुके थे कि किसी भी शर्त पर सन्धि करने को तैयार थे। इस्तमबोल-निवासियों का यह कहना कि अब खून बहाने से सिर फूँक देना अधिक अच्छा है, इस बात का स्पष्ट प्रमाण है कि सन् १९१९ के ग्रीष्म-काल तक तुर्कजाति अत्यधिक घायल और निरुत्साह हो चुकी थी।

यह तुर्कों का सौभाग्य था कि ऐसे कठिन काल में यूनानी सेनाओं ने स्मर्ना में उतरकर तुर्कों को जगा दिया; क्योंकि इसमें बिलकुल सन्देह न था कि यूनानी रक्षा करने नहीं, बल्कि देश को विजय करने के अभिप्राय से आये थे। फिर उनका रंग-ढंग भी भड़कानेवाला था। इसलिए जब यूनानियों ने "अश्क़" और "अस्कशेर" के नगरों की ओर पग बढ़ाया तब तुर्क किसान और सैनिक मरने-मारने को उद्यत हो गये; क्योंकि अनातोलिया को तो उन्होंने कभी स्वप्न में भी न देखा था, परन्तु प्रतिदिन के आवागमन से इन नगरों से उन्हें बहुत प्रेम था। अगले दो वर्षों में कमाली आन्दोलन के सफल होने का मुख्य कारण यह था कि तुर्कों में राष्ट्रीयता के भाव जागृत हो चुके थे।

कमाल पाशा ने भी इस विचार से सुल्तान का प्रत्यक्ष विरोध नहीं किया था कि एक तो वे उन्हें नाममात्र के लिए राष्ट्रीय आन्दोलन का नेता बनाये रखना चाहते थे और दूसरे रक्षात्मक अधिकारों की संस्था अभी पूर्ण रूप से उनके अधिकार में नहीं आई थी। इस संस्था के बहुत से नेता अब भी इस्तमबोल में थे और उन्हें यह समझाने की आवश्यकता थी कि भविष्य में होनेवाला आन्दोलन देश की कायापलट कर देगा। इस संस्था ने अपनी पहली कान्फ्रेंस जुलाई सन् १९१९ में "अरज़म" के स्थान पर और दूसरी सितम्बर के महीने में "सवास" में की। इन सर्व-प्रिय उत्सवों का फल राष्ट्रीय समझौते के रूप में निकला जिसके अनुसार दूसरी जातियों को इस शर्त पर स्वाधीनता दी गई कि वे भी तुर्कों की स्वाधीनता और उनके अधीनस्थ प्रदेशों पर उनका पूर्ण अधिकार मान लें और उन विशेष अधिकारों को छोड़ दें जो तुर्कों की पूर्ण राष्ट्रीय सत्ता की राह में रोड़े अटकाते हैं। इस राष्ट्रीय समझौते को इतनी सहायता मिली कि फ़रीद के मंत्रिमंडल को त्यागपत्र देना पड़ा। फिर इस वर्ष पतझड़ की ऋतु के नये चुनाव में राष्ट्र-प्रेमियों की सत्ता भी स्थापित हो गई। जनवरी सन् १९२० में जब इस्तमबोल के स्थान पर राष्ट्रीय व्यवस्थापिका सभा की बैठक हुई तब उसने तुरन्त ही राष्ट्रीय समझौते के बारे में अपनी स्वीकृति दे दी जिससे यह ज्ञात हुआ कि कमाल

अतातुर्क के केन्द्र-स्थान—इस्तमबोल और अंकारा—टर्की के स्वाधीनता-युद्ध में सहयोग से कार्य कर सकते हैं। परन्तु मार्च के महीने में सुलतान के कहने पर, जो मित्रराष्ट्रों की अपेक्षा कमाल पाशा से अधिक डरते थे, विदेशी सेनाओं ने, जिनमें अँगरेज़ी सैनिकों की संख्या अधिक थी, कुस्तुन्तुनिया पर अधिकार करके उच्च श्रेणी के ४० नेताओं को, जिनमें ज़ियागोकल्प भी थे, माल्टा में नज़रबन्द कर दिया। इसके बाद स्वाधीन टर्की के मार्ग-प्रदर्शक का पूर्ण भार कमाल पाशा के कन्धों पर आ पड़ा और अब देश में सुलतान के विरुद्ध कुस्तुन्तुनिया में मित्रराष्ट्रों और स्मर्ना में यूनानियों के विरुद्ध जो युद्ध हो रहे थे, उन्होंने एक राष्ट्रीय युद्ध का रूप ले लिया।

२३ अप्रैल, सन् १६२० को अंकारा में राष्ट्रीय व्यवस्थापिका सभा की बैठक हुई। इसमें यह निश्चय हुआ कि सुलतान मित्रराष्ट्रों के हाथ की कठपुतली बना हुआ है, इस-लिए उसे कोई राजकीय अधिकार प्राप्त नहीं और भविष्य में समग्र राजकीय अधिकार राष्ट्रीय व्यवस्थापिका सभा को प्राप्त होंगे। दूसरे ही दिन कमाल पाशा इस सभा के सभा-पति चुन लिये गये। आरम्भ में तो ऐसा ज्ञात होता था कि सारे प्रबन्ध कुछ समय के लिए हैं, क्योंकि न तो राजधानी ही बदली गई थी और न देश के विधान में कोई विशेष परिवर्तन हुआ था, परन्तु ३० अप्रैल को यह घोषणा कर दी गई कि अंकारा का शासन-सत्ता ही राष्ट्रीय सत्ता है।

सन् १९२० की ग्रीष्म-ऋतु में कमाल पाशा को बड़ी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। उनकी सेना में तुर्क नौजवान बहुत कम भर्ती हो रहे थे और इस बात की भी कोई आशा न थी कि भविष्य में भी उनकी संख्या बढ़ जायगी। पराजित और निःशस्त्र होने के कारण उनके पास युद्धोपयोगी शस्त्र भी न रह गये थे। पहले वर्ष तो उन्होंने मित्रराष्ट्रों के शस्त्रागारों पर छापे मार-मारकर अपना काम चलाया, फिर भी स्मर्ना, अनातोलिया और साइलीशिया पर विदेशियों का अधिकार हो चुका था। पूर्वी सीमा पर आरमीनियनों से युद्ध छिड़ गया था और यूनानी इस वर्ष धीरे-धीरे आगे बढ़ते ही चले आ रहे थे, क्योंकि टर्की की कोई संगठित सेना उनका विरोध नहीं कर रही थी। केवल वलकशेर की दो-एक सैनिक टुकड़ियाँ समय-समय पर उन्हें आगे बढ़ने से रोकती रहती थीं।

फिर भी मित्रराष्ट्रों का मोर्चा, जो सन् १९२० में अजेय प्रतीत होता था, एकाएक निर्बल पड़ने लगा। इसका यह कारण था कि वार्सेली के विजेता लूटी हुई धन-सम्पत्ति का बटवारा करने में परस्पर लड़ने लगे। जब इटलीवालों ने अँगरेज़ों को यूनानियों की सहायता करने पर तैयार देखा, तब वे रुष्ट हो गये। कारण, उन्होंने अनिच्छा से अनातोलिया पर अधिकार कर रखा था। इसलिए जब सन् १९२० की

वसन्त-ऋतु में सुल्तान ने "स्यूरिस" की सन्धि पर हस्ताक्षर करके स्मर्ना के प्रान्त पर भी इटालियनों का अधिकार स्वीकार कर लिया, तब इस सम्बन्ध में उन्हें और भी कोई दिलचस्पी बाक़ी न रही। इस प्रकार सन् १९२१ में उन्होंने अंकारा से बातचीत करके अपनी सेनाओं को हटा लिया। फ़्रांसीसी—जो पश्चिम में जर्मनी के विरुद्ध स्वीकृति देने में हिचकिचाते थे और पूर्व में दमिश्क़ के शाह फ़ैसल की सहायता के विषय में ब्रिटेन से उकता उठे थे—अब साथी को हानि पहुँचाने के लिए अंकारा से मैत्रीभाव बढ़ाने लगे। इसलिए २० अक्तूबर, सन् १९२१ को कमाल पाशा ने एक पश्चिमी शक्ति से सबसे पहले सन्धि की, जो इतिहास में अंकारा की सन्धि के नाम से प्रसिद्ध है। इस सन्धि के अनुसार टर्की और फ़्रांस में यह निश्चित हुआ कि साइलीशिया को ख़ाली कर दिया जाय। सिकन्दरिया के नगर "सनजक़" में एक नई सत्ता—जिस पर तुर्कों के समस्त प्राचीन अधिकार सुरक्षित रहें—स्थापित कर दी जाय तथा तुर्कों और फ़्रांसीसियों में जो युद्ध हो रहा है, उसको बन्द कर देने की घोषणा की जाय। इसके बाद फ़्रांसीसियों ने अपने सारे प्रयत्न अँगरेज़ों को स्याम से, दूर रखने में लगा दिये और उनको अधिक कठिनाइयों में फँसाने के अभिप्राय से करोड़ों डालर के बहुमूल्य अस्त्र-शस्त्र साइलीशिया में छोड़ दिये। कारण यह था कि अँगरेज अब

भी अपनी संगीनों के बल पर सुल्तान और इस्तमबोल की सन्धि का पक्ष ले रहे थे।

दो वर्ष के इस कठिन काल में रूस ने अपनी नैतिक सहायता से अंकारा की सत्ता को बड़ी शक्ति प्रदान की। गृह-युद्ध के कारण बोल्शेविक शासन टर्की को प्रायोगिक सहायता तो न दे सकता था, परन्तु इसमें कोई सन्देह नहीं कि वह टर्की के उस शासन को स्वीकृत करने के लिए तैयार था जो उसी के समान एक ओर तो देश की पुरानी और निरर्थक शासन-सत्ता से और दूसरी ओर विदेशी शक्तियों अर्थात् मित्रराष्ट्रों से युद्ध कर रहा था। रूस और टर्की में पहली सन्धि अगस्त सन् १६२० में और दूसरी सन्धि १६ मार्च, सन् १६२१ में, मास्को में, हुई। इसके अनुसार दोनों शक्तियों ने एक दूसरे को स्वीकृत करके अपनी सीमाएँ निर्धारित कर लीं तथा भविष्य में आर्थिक और व्यापारिक सम्बन्ध स्थापित करने का भी प्रबन्ध कर लिया।

अंकारा की राजसत्ता के शनैः शनैः शक्ति प्राप्त करने का केवल यही कारण न था कि मित्रराष्ट्रों का मोर्चा निर्बल पड़ गया था, वरन् इसका मुख्य कारण यह था कि तुर्क सेनाओं ने युद्ध-क्षेत्र में जमकर शत्रुओं का विरोध करने की पूर्ण योग्यता दिखाई थी और इसी बात ने इटालियनों, फ़्रांसीसियों और कदाचित् रूसवालों को भी उनकी ओर

झुका दिया था। कमाल पाशा और उनके दाहिने हाथ असमत अनूनू के लिए आशा और निराशा का समय था। इस समय प्रत्येक कार्य में—चाहे वह अंकारा में विरोधियों और समालोचकों को एक केन्द्र पर लाना या मोर्चे पर सेनाओं की पंक्तियों को सुदृढ़ करना या गाँव में लोगों को सेना में भर्ती होने के लिए तैयार करना या बुरे मार्गों पर खच्चर और घोड़ेवालों या परिश्रमी किसान स्त्रियों का हथियार और रसद पहुँचाने के विषय में उत्साह बढ़ाना हो—कमाल पाशा ही को आगे-आगे रहना पड़ता था। देश-प्रेमियों के पास अब भी अस्त्र-शस्त्रों की कमी थी। उनकी सेनाओं में या तो नये रंगरूट थे या थके-माँदे पुराने सैनिक। उस पर यह कहना कि वे अपने पदाधिकारियों के अनुशासन पर भी पूर्ण विश्वास नहीं कर सकते थे। कारण, एक बार तो ऐसा हुआ कि एक सेनापति ने न केवल कमाल पाशा की आज्ञा को नहीं माना, वरन् अपनी सेना को देश-प्रेमियों पर आक्रमण करने का भी आदेश दे दिया।

फिर भी जनवरी, सन् १९२१ में और फिर मार्च के महीने में तुर्कों ने असमत पाशा के नेतृत्व में यूनानियों को अनूनू के स्थान पर बुरी तरह हराया। इसके पश्चात् यूनानियों को नई सहायता भेजी गई और मित्रराष्ट्रों ने भी उनके उत्साह को बढ़ाया। इसका अन्तिम फल यह हुआ कि उन्होंने अंकारा की ओर बढ़ना आरम्भ कर दिया। इस

समय यूनानियों के विरोध में न केवल तुर्कों की ही संख्या कम थी, वरन् उनके पास युद्ध-सामग्री भी बहुत कम थी। ऐसे कठिन काल में कमाल पाशा को प्रधान सेनापति का पद दिया गया। अपने नये पद पर आते ही सबसे पहले उन्होंने अंकारा के पश्चिम में अन्तिम पंक्ति के रक्षात्मक मोर्चों को सुदृढ़ बनाया और २२ दिन के लगातार युद्ध के बाद १३ सितम्बर, सन् १९२१ को यूनानी पीछे हटने के लिए बाध्य हो गये। इस प्रकार तुर्कों ने युद्ध की अन्तिम सीढ़ी को पार कर लिया।

अभी तुर्क-सेना इतनी शक्तिशाली न थी कि आगे बढ़कर शत्रु पर आक्रमण करती, इसलिए अगला वर्ष सैनिक संगठन, प्रजा पर अंकारा की सरकार का प्रभाव बढ़ाने और अंकारा की सत्ता पर कमाल पाशा का अधिकार सुदृढ़ करने में बिताया गया। कमाल पाशा का उन्नति-मार्ग सरल न था। एक ओर धार्मिक प्रवृत्तिवालों और नरम दलवालों का जत्था था जो मित्रराष्ट्रों के विरुद्ध कमाल पाशा की सहायता तो कर रहा था, परन्तु यदि उसे यह ज्ञात हो जाता कि वे देश में पूर्ण सुधार करना चाहते हैं तो कदाचित् वह उनसे रुष्ट हो जाता। दूसरी ओर कुछ गरम दलवाले थे जिनका सम्बन्ध कम्यूनिस्टों से था। इस जत्थे को रूस से कोई सहायता नहीं मिल रही थी, क्योंकि कमाल पाशा और बोलशेविज़्म के सहायकों में समझौता हो चुका था और

तुर्कों में भी यह जत्था अधिक लोकप्रिय न था। केन्द्रीय सरकार को स्थिर और शक्तिशाली बनाने के लिए कमाल् पाशा ने अपने अनुयायियों की एक पृथक् संस्था बना ली जिसके सदस्य अधिकारों के रक्षक कहलाने लगे। यही संस्था भविष्य में प्रजातन्त्र-दल के नाम से प्रसिद्ध हुई।

इस अवधि में मित्रराष्ट्रों में संघर्ष बढ़ता गया। यूनानियों में कुछ तो मोर्चे की शिथिलता से और कुछ यूनान में "वेन्ज़िलस" की अवनति से लोगों में निराशा फैल गई। यहाँ तक कि अगस्त सन् १६२२ में कमाल पाशा इस निश्चय पर पहुँचे कि अब उनके विरुद्ध पग बढ़ाने का समय आ गया है। २६ अगस्त को "अफ़्यानकराहिसार" यूनानियों के हाथ से निकल गया और ६ सितम्बर तक तुर्कों ने यूनानियों से अपना सारा देश खाली करा लिया। अभी तुर्कों ने स्मर्ना पर दोबारा अधिकार किया भी न था कि कमाल पाशा ने मित्रराष्ट्रों को भी अपने देश से निकालने के प्रयत्न आरम्भ कर दिये और गैलीपोली की ओर एक सेना इस अभिप्राय से भेज दी जिससे मित्रराष्ट्रों को "चांक" के स्थान से मार भगाया जाय। तुर्कों का यह रंग देखकर फ़्रांसीसी और इटालियन सेना स्वयं ही वहाँ से हट गई। इस समय तुर्कों के विरोध में ब्रिटेन की सेना बहुत ही थोड़ी थी। फिर यह भी डर था कि यदि यह युद्ध दीर्घकाल तक होता रहा तो अँगरेज़ इसका विरोध करना

आरम्भ कर देंगे। इसलिए ब्रिटिश सरकार ने टर्की से अलग ही रहना उचित समझा और कुछ सोच-विचार के बाद ११ अक्तूबर, सन् १९२२ को "मुदानिया" के स्थान पर समझौते पर हस्ताक्षर कर दिये। दूसरे वर्ष अर्थात् २४ जुलाई, सन् १९२४ को लासीनी की सन्धि हुई, जिसके अनुसार स्यूरिस की सन्धि निरर्थक हो गई और अंकारा की सरकार को टर्की की सच्ची सरकार मान लिया गया। ( सुल्तान नवम्बर सन् १९२२ में टर्की से भाग चुका था ) और उन समस्त सिद्धान्तों पर—जो राष्ट्रीय सन्धि में निश्चित हो चुके थे—फिर से कार्य किया गया। इस सन्धि में देशप्रेमी तुर्कों की इच्छा के अनुसार देश की सीमाएँ निर्धारित कर दी गईं और सारे विशेष भेदों का अन्त कर दिया गया। इसके अतिरिक्त यूनानियों और तुर्कों में जो झगड़े थे, उन्हें भली भाँति इस प्रकार मिटाने का प्रयत्न किया कि यूनानियों ने हरजाना देने का वचन दिया जिसे तुर्कों ने इसलिए माफ़ कर दिया कि यूनानियों की आर्थिक दशा अच्छी न थी। इस सन्धि के अनुसार कुछ माँगों को छोड़कर टर्की की सब माँगें पूरी हो गईं। दर्रे दानियाल पर तुर्कों को अपने दुर्ग रखने का अधिकार न रहा और उसे अन्तरराष्ट्रीय प्रबन्ध के अधीन दे दिया गया या सिकन्दरिया के समीप सनजक़ का प्रान्त यद्यपि स्वाधीन ही रहा, परन्तु कुछ समय के लिए फ़्रांस को उस पर शासन करने का

अधिकार दे दिया गया। पूर्वी सीमाएँ, जिनमें ईराक़ भी सम्मिलित था, अब भी न निर्धारित हो पाईं। परन्तु डूड्कानीज़ के द्वीप पहले के समान इटली के अधिकार में रहे। फिर भी इस थोड़े से समय में कमाल पाशा ने केवल बड़े-बड़े कार्य ही नहीं किये, वरन् टर्की को भी एक नया जीवन दिया जिसका प्रमाण लासीनी की सन्धि और उसकी शर्तों से मिलता है। इस सन्धि के कुछ ही सप्ताह बाद बिना किसी शर्त के अंकारा की राजसत्ता को टर्की की राजसत्ता स्वीकार कर लिया गया जिससे अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में कमाल पाशा का यथेष्ट मान हो गया।

नई राष्ट्रीय व्यवस्थापिका सभा के चुनाव के अवसर पर सारे संसार को भली भाँति विदित हो गया कि टर्की में कमाल पाशा को कितना उच्च पद प्राप्त है। सन् १९२२ में जब अधिकारों के रक्षक की संस्था को राष्ट्रीय संस्था मान लेने का समय आया तब कमाल पाशा ने लगातार कई महीनों तक देश का भ्रमण किया। वे गाँव-गाँव और घर-घर जाकर सरकारी नौकरों और किसानों से उनका दुख-दर्द पूछते थे। इस प्रकार उन्होंने तुर्की के हृदयों में घर करके, उनसे ऐसा मेल-जोल पैदा कर लिया जो एक लोकप्रिय शासक के लिए अति आवश्यक है। चुनाव के बाद जब राष्ट्रीय संस्था के सदस्यों का बहुमत हो गया तब प्राचीन मंत्रिमंडल के मंत्रियों ने स्वयं ही त्यागपत्र दे दिया।

अब कमाल पाशा के लिए मार्ग खुला हुआ था। जनता उन्हें अपना शासक मान चुकी थी और उनके पिछले कुछ वर्षों के महान् कार्यों ने केवल टर्की में ही नहीं, वरन् उससे बाहर भी उनकी धाक जमा दी थी। इसलिए २९ अक्तूबर, सन् १९२३ को टर्की एक प्रजातन्त्र राज्य घोषित कर दिया गया और व्यवस्थापिका सभा ने कमाल पाशा को अपना सभापति चुन लिया।

---

# अध्याय ७

## शासन-प्रणाली

यह कमाल पाशा का उत्थान-काल था। इस समय वे यथार्थ में देश की नौका के कर्णधार थे। टर्की का भविष्य उनके हाथ में था और वे उसके भविष्य को अपने प्रयत्नों द्वारा उज्ज्वल भी बनाना चाहते थे। उनकी हार्दिक इच्छा थी कि धीरे-धीरे जिस सीमा तक जाति पाश्चात्य सभ्यता को अपना सके, उसको उस रंग में रँगने का प्रयत्न किया जाय। परन्तु देश की वर्तमान सारी संस्थाओं को एक नवीन साँचे में ढाले विना यह परिवर्तन सम्भव न था। फिर इस बात की भी आवश्यकता थी कि इनमें से बहुत सी संस्थाओं को मिटाकर उनके स्थान पर नई संस्थाएँ स्थापित

की जायँ और जनता की चित्तवृत्ति को भी बदला जाय। यहाँ इस बात को भी समझ लेना आवश्यक है कि आरम्भ ही से मुस्तफ़ा कमाल पाश्चात्य सभ्यता और आधुनिक सभ्यता को किन अर्थों में समझते थे। मनोवृत्ति और शिक्षा के दृष्टिकोण से वे स्वतन्त्र और उच्च विचारों के थे। उनका विश्वास था कि प्रत्येक जाति को पूर्ण स्वाधीन होने का अधिकार है। वे मनुष्यों के अधिकारों और निष्पक्ष क़ानूनों पर पूर्ण विश्वास रखते थे। उनका विचार था कि सत्ता ही एक ऐसी संस्था है जो देश के सम्पूर्ण निवासियों को समान रूप से देख सकती है। उनका कहना था कि यदि बुद्धि और विज्ञान से सहायता ली जाय तो मनुष्य पूर्ण उन्नति कर सकता है। उनके समीप पाश्चात्य देशों की उन्नति का सबसे बड़ा रहस्य विज्ञान और औद्योगिक उन्नति थी। वे भली प्रकार समझ चुके थे कि जब तक तुर्क अपने राष्ट्रीय जीवन में विज्ञान और नये सिद्धान्तों से काम न लेंगे, तब तक देश उन्नति न कर सकेगा। अन्धविश्वास को वे उन्नति के मार्ग का कंटक समझते थे। देश-प्रेम के बारे में कमाल पाशा का दृष्टिकोण तथा उनका और तुर्कों का समझौता कुछ ऐसा था कि इसके बारे में कदापि दो मत नहीं हो सकते। यों तो उनकी मनोवृत्ति सांसारिक उन्नति की ओर अत्यधिक थी, परन्तु इस सीमा तक नहीं कि वह धर्म की सीमा को पार कर जाय। उनका निजी जीवन

अवगुणों से दूर था। दूसरे के गुणों और दुर्गुणों से भी उन्हें कोई ख़ास दिलचस्पी न थी। जहाँ तक लोगों के व्यक्तिगत रहन-सहन का सम्बन्ध था, वे केवल उसकी इसी समस्या को देखते थे कि क्या वह टर्की की क्रान्ति के पक्ष में है या विरोध में।

सन् १९३५ में जब राष्ट्रीय संस्था ने अपने भविष्य के कार्यों के विषय में सुधारों की एक लम्बी-चौड़ी योजना निकाली तो उसने यह भी घोषणा कर दी कि अब टर्की का राष्ट्रीय जीवन छः सिद्धान्तों पर निर्भर होगा। इन सिद्धान्तों की छः तीरों से तुलना की जाती है जो लाल पृष्ठभूमि में दिखाये जाते हैं। यथार्थ में यही तीर इस संस्था के चिह्न हैं। उपर्युक्त योजना के पढ़ने से विदित होता है कि तुर्क प्रजा-तन्त्र के पुजारी, देश-सेवी और जनता के शासन के समर्थक हैं और उनका शासन आर्थिक कम्यूनिस्टिक और क्रान्ति-कारी परिवर्तन चाहता है। इस योजना के शब्द और वाक्य तो राष्ट्रीय संस्था के थे, परन्तु विचार कमाल पाशा के ही थे। यह योजना बहुत ही संक्षिप्त रूप में, केवल कुछ शब्दों में, कमाल पाशा के उस विश्वास का द्योतक है जिसमें निश्चय की दृढ़ता, कार्य करने की उत्कट अभिलाषा और व्यक्तिगत आकर्षण भी इतना था कि जब उन्होंने टर्की में क्रान्ति का आन्दोलन चलाया तब किसी व्यक्ति को भी विरोध करने की स्पर्धा न हुई। १५ वर्ष बाद जब कमाल पाशा

की मृत्यु हुई तब उस समय राष्ट्रीय जीवन का कोई भी अंग ऐसा न था जिसे उन्होंने अपने व्यक्तिगत विचारों से न रँग दिया हो।

इसमें कोई सन्देह नहीं कि कमाल पाशा को नवीन राजनीतिक ढाँचे के कुछ भाग टर्की में पहले ही तैयार मिले। जैसे सन् १८७६ में मिधत पाशा ने जो विधान तैयार किया था, वह कुछ अंश तक उन्नतिशील था। इसके अतिरिक्त सन् १९०८ से संगठन और उन्नति की संस्था लगातार पाश्चात्य ढंग की वैधानिक शासन-सत्ता स्थापित करने का प्रयत्न कर रही थी और स्वयं भी एक प्रकार की संस्थाओं की जन्मदात्री थी। यदि ध्यानपूर्वक देखा जाय तो यथार्थ में टर्की का प्रजातन्त्र राज्य इन्हीं प्रारम्भिक प्रयत्नों का उन्नतिपूर्ण उदाहरण है। राष्ट्रीय व्यवस्थापिका सभा को विधान बनाने के अधिकार प्रत्यक्ष रूप से तथा सभापति और मन्त्रियों द्वारा प्रबन्ध-कार्य अप्रत्यक्ष रूप से प्राप्त हैं। राष्ट्रीय व्यवस्थापिका सभा के सदस्य अप्रत्यक्ष रूप से पुरुषों और स्त्रियों के मत से चुने जाते हैं। स्त्रियों को मत देने का अधिकार सन् १९३४ में प्राप्त हुआ था। उसी समय मतदाताओं की आयु का प्रतिबन्ध भी १८ वर्ष से बढ़ाकर २१ वर्ष तक कर दिया गया था। राष्ट्रीय व्यवस्थापिका सभा सभापति को चार वर्ष के लिए चुनती है, क्योंकि उसके सदस्य भी चार ही वर्ष तक रहते हैं। इसके बाद फिर

चुनाव होता है। सभापति ही देश की सेना का सेनापति भी होता है। वही प्रधान मन्त्री का भी चुनाव करता है और व्यवस्थापिका सभा के बनाये हुए उन विधानों को भी प्रकाशित करता है जिनके वाद-विवाद में उसे भाग लेने का कोई अधिकार नहीं। सभापति कुछ अंश तक व्यवस्थापिका सभा के बनाये हुए विधानों को अस्वीकार कर सकता है, परन्तु संशोधन हो जाने के बाद सभा फिर इन विधानों को स्वीकृत करा सकती है।

चाहे उसे सभापति बुलाये या न बुलाये, राष्ट्रीय व्यवस्थापिका सभा या समिति की बैठक वर्ष में एक बार अवश्य होती है। साधारणतया समिति की बैठक छः महीने तक रहती है, जिसके आरम्भ होते ही वार्षिक बजट सामने रखा जाता है। प्रधान मन्त्री व्यवस्थापिका सभा के सदस्यों में से १६ मन्त्री चुनता है। प्रत्येक मन्त्री एक विभाग का उत्तरदायी होता है, जैसे कृषि-विभाग, अर्थ-विभाग या स्वास्थ्य-विभाग इत्यादि। व्यवस्थापिका सभा के सदस्य किसी और पद पर नियुक्त नहीं हो सकते और उन्हें अपना सारा समय उसी के कामों में लगाना पड़ता है। यदि कोई सदस्य बिना किसी उचित कारण के व्यवस्थापिका सभा की बैठक से लगातार दो महीने तक अनुपस्थित रहे तो उसे सदस्यता का पद त्यागना पड़ता है।

चुनाव का प्रबन्ध देश की प्रतिनिधि-संस्था करती है।

आम लोग इसी संस्था की देखरेख में नियत संख्या में चुननेवालों को चुनते हैं। आगे चलकर यही चुनाव करनेवाले डिपुटियों या व्यवस्थापिका सभा के सदस्यों को चुनते हैं। केवल कुछ सदस्यों को छोड़कर, जो टेकनीकल या विशेष योग्यता के आधार पर चुने जाते हैं, शेष सब सदस्य प्रतिनिधि-संस्था के ही होते हैं। सन् १६३६ में ४२६ सदस्यों में से ४२४ सदस्य प्रतिनिधि-संस्था के ही थे। प्रत्येक क्षेत्र से कई उम्मेदवार खड़े होते हैं। चुनाव करनेवाले उनमें से किसी एक को उस क्षेत्र के डिपुटी की हैसियत से चुन लेते हैं।

प्रान्तीय शासन में भी चुनाव इसी प्रकार होता है। चुनाव करनेवाले हर प्रान्त की प्रतिनिधि कौंसिल के मेम्बरों का भी चुनाव करते हैं। यह कौंसिल अपने प्रान्त के गवर्नर को सहायता देती है। केन्द्रीय सरकार गवर्नरों को नियुक्त करती है। गवर्नर की सहायता के लिए एक चुनी हुई कौंसिल और एक अफ़सरों की कौंसिल रहती है। अफ़सरों की कौंसिल में अधिकतर इंसपेक्टर, इंजीनियर और अन्य प्रबन्धकर्त्ता होते हैं। सारे टर्की को ६३ प्रान्तों या विलायतों में बाँट दिया गया है। हर प्रान्त में कई ज़िले हैं और हर ज़िले को फिर तहसीलों में बाँट दिया गया है। हर तहसील में बहुत से गाँव होते हैं। कमाल पाशा ने ग्रामसुधार के लिए बहुत कुछ किया है। उस्मानी शासन-

काल में सारा ध्यान टैक्सों के वसूल करने में लगा दिया जाता था। गाँववाले अपनी रक्षा का प्रबन्ध स्वयं करने के लिए बाध्य थे। इसलिए उन्होंने अपने-अपने गाँव को उत्तर-दात्री शक्ति और मुखिया की देखरेख में एक पंचायत बना रखी थी। वर्तमान टर्की में देहातों के प्रबन्ध की नींव इन्हीं पंचायतों पर रखी गई है। देहातों के प्रबन्ध के सिलसिले में केन्द्रीय सरकार की दुर्बलताओं को दूर करने में इन पंचायतों को प्रोत्साहित किया जाता है। वर्तमान देहाती पंचायतें पुरानी पंचायतों की तुलना में बहुत छोटी हैं और जिन व्यक्तियों ने टर्की का भ्रमण किया है, उन्होंने इस बात का अनुभव किया होगा कि टर्की का देहाती क्षेत्र अब भी प्राचीन सिद्धान्तों पर चल रहा है और हज़ारों गाँव, जो ऊँची-ऊँची घास के मैदानों के मध्य में बसे हुए हैं, शहरों से बिलकुल अलग हैं। गाँववालों को अपनी सड़कों की मरम्मत और पानी पहुँचाने का प्रबन्ध स्वयं करना पड़ता है। टर्की की नवीन सत्ता स्कूलों की इमारतें बनवाने में भी उनको प्रोत्साहित करती है, क्योंकि देहाती क्षेत्रों के लिए इसके शिक्षा-सम्बन्धी बजट में केवल इतना ही धन रहता है कि उससे अध्यापकों का वेतन दिया जा सके।

राष्ट्रीय संस्था की प्रारम्भिक सीढ़ी ग्राम ही हैं। प्रान्त के शासन का चुनाव-सम्बन्धी विभाजन किसी अंश तक सोवियट ढंग पर स्थिर है। परन्तु उन दोनों में यथेष्ट अन्तर भी

है। तहसीलों के प्रतिनिधियों का एक समिति बनाई जाती है। फिर इस समिति के सदस्य अपने प्रतिनिधि प्रान्त की समिति में भेजते हैं। हर चौथे वर्ष अंकारा में राष्ट्रीय कांग्रेस की बैठक होती है।

कमाल पाशा ने टर्की के लिए जो नवीन विधान बनाया है, उसका संक्षिप्त वर्णन ऊपर किया जा चुका है। आजकल टर्की का प्रबन्ध इसी विधान के अनुसार हो रहा है। यथार्थ में इस ढाँचे के देखने से यह ज्ञात नहीं होता कि प्रायोगिक रूप में यह विधान किस सीमा तक सफल है। व्यवस्थापिका सभा के सदस्यों, डिपुटियों और विभिन्न संस्थाओं ने १५ वर्ष तक मुस्तफ़ा कमाल की देखरेख में कार्य किया। वे स्वयं समग्र सुधारों के कर्त्ता-धर्त्ता थे। देश उन्हीं की निर्धारित नीति पर चलता था। प्रबन्ध-कार्य की साधारण से साधारण बातों को भी वे स्वयं देखते थे। इन सब बातों के अतिरिक्त टर्की में उनको एक अधिनायक के पूरे अधिकार प्राप्त थे। परन्तु वे व्यवस्थापिका सभा की सम्मति लेते थे और सारे विधान व्यवस्थापिका सभा की ओर से लागू किये जाते थे। यद्यपि व्यक्तिगत रूप से सर्वसाधारण जनता से सम्बन्ध रखने में उन्हें बहुत कष्ट उठाना पड़ता था, फिर भी देश का दौरा करके वे घंटों लोगों से बातचीत करते रहते थे। बहुधा वे अचानक गाँवों में पहुँचकर लोगों का दुख-दर्द पूछते थे और इस प्रकार उन्हें यह भी ज्ञात हो

जाता था कि उनकी नई नीति के सम्बन्ध में लोगों की क्या सम्मति है। वे यह कभी नहीं चाहते थे कि सुधार उस सीमा को उल्लंघन कर जाय, जहाँ से एक ओर पढ़े-लिखे लोगों की बड़ी संख्या आगे बढ़ने से रुक जाय और दूसरी ओर घरेलू विरोध आरम्भ हो जाय। ऐसी दशा में वे उस समय की आशा करने लगते थे, जब स्वयं शिक्षा उन सुधारों के लिए पृष्ठभूमि तैयार कर दे। परन्तु जिस समय वे इन सब बातों से भी काम चलता हुआ न देखते तो फिर उनका आदेश विधान का रूप धारण कर लेता था और वे देश के किसी व्यक्ति या संस्था की अनुमति लिये बिना अपने आदेश का पालन कराते थे।

पहले भी प्रान्तों के प्रबन्ध की अच्छाई या बुराई और उनकी उन्नति का होना गवर्नर के व्यक्तित्व पर निर्भर होता था और अब भी है। जिन लोगों को स्मर्ना के प्रान्त में जाने का अवसर मिला है, उन्होंने प्रान्तीय शासन के समस्त विभागों में असाधारण उन्नति देखी होगी। इसकी सफलता का श्रेय जेनरल काजिम दर्क को है जो सन् १९२५ से लेकर सन् १९३५ तक यहाँ के गवर्नर रहे। यह ठीक है कि स्मर्ना का प्रान्त दूसरे प्रान्तों से अधिक उपजाऊ है, परन्तु कुछ गवर्नर, जिनके पास स्मर्ना ही के समान धन-धान्यपूर्ण प्रान्त थे, अपने प्रान्तों में इसकी आधी भी उन्नति न कर सके। स्मर्ना के देहातों में इतने स्कूल हैं जितने कि और

किसी प्रान्त के देहातों में नहीं हैं। वहाँ के वाचनालय, अच्छी सड़कें, बाग़ और खेल-तमाशों के क्लब अब भी जेनरल काज़िम दर्क की याद दिलाते हैं। बाद में जब वे थ्रेस के गवर्नर बना दिये गये तब स्मर्ना के प्रान्त में उन्नति के सम्बन्ध में प्रत्येक प्रश्न का उत्तर यही मिलता था कि यह सब काज़िम दर्क की कार्य-पटुता है। सुना जाता है कि उन्होंने थ्रेस को भी उन्नति के शिखर तक पहुँचाया।

सैद्धान्तिक रूप से प्रजातन्त्र शासन-प्रणाली में किसी नेता की अत्यधिक महत्ता भी उसके लिए बाधक नहीं होती, परन्तु पाश्चात्य देशों की पार्लियामेंट के साथ प्रजातन्त्र-शासन-प्रणाली की मुख्य दुर्बलता यह है कि वह नेता की अत्यधिक महत्ता से भय खाने लगती है। यही कारण है कि बहुधा वह ऐश्वर्यशाली व्यक्तियों को अपनी पार्टी से अलग कर देती है। पाश्चात्य देश अपने प्रजातन्त्र-प्रणाली के प्राचीन सिद्धान्तों को देश की राष्ट्रीय संस्था के साथ नहीं मिला पाते। रूस, जर्मनी और इटली भी स्वाधीन संस्थाओं की सहायक राष्ट्रीय संस्था को सन्देह की दृष्टि से देखते हैं। फिर भी यह बात स्मरण रखनी चाहिए कि टर्की का विधान नागरिकों के अधिकारों को सुरक्षित रखने का उत्तरदायी है। टर्की के विधान के सम्मुख प्रत्येक व्यक्ति समान है और जब तक कि वह उसे तोड़ने के लिए उसके चंगुल में न आ जाय, कोई व्यक्ति उसके जन-धन को हानि

नहीं पहुँचा सकता। टर्की में प्रत्येक व्यक्ति को अपने विचार प्रकट करने, भाषण देने और सामाजिक जीवन व्यतीत करने की पूर्ण स्वाधीनता प्राप्त है। वहाँ केवल उन प्रतिबन्धों के—जो समस्त संस्थाओं पर जातीय भेदभाव, जातीय संघर्ष, अन्तरराष्ट्रीय उलझनें या जो प्रतिबन्ध आलोचना करने के सम्बन्ध में प्रेस पर लगाये गये हैं—और कोई दूसरे प्रतिबन्ध नहीं हैं। जर्मनी के गेस्टापो के समान टर्की में कोई ऐसा विभाग नहीं है, जो तुर्कों से बेगार ले या विना कारण केवल सन्देह के आधार पर उन्हें कारागारों में सड़ा डाले। टर्की की राष्ट्रीय संस्था भय से काम न लेकर प्रोपेगेंडा से काम लेती है एवं शासन जनता को भय दिखाकर और बलपूर्वक शासन के विचारों से सहमत कराने का प्रयत्न नहीं करता। यदि कोई व्यक्ति टर्की को साधारण दृष्टि से देखे तो भी वह यह न कहेगा कि यहाँ का शासन कम्यूनिस्ट है। परन्तु अब यह प्रश्न उठता है कि क्या हम प्रजातन्त्र टर्की को यथार्थ में प्रजातन्त्र-राज्य कह सकते हैं या नहीं ?

टर्की के बारे में इस सत्यता को छिपाना कठिन है कि वहाँ के निवासियों को शासन स्वेच्छा से स्वाधीनता देता है। इसलिए इस बात से वहाँ की बहुत सी विरोधात्मक बातें—जैसे प्रजातन्त्रवादी अधिनायक—राष्ट्रीय संस्था परन्तु कम्यूनिस्टिक सिद्धांतों से रहित, प्रतिनिधित्व परन्तु इसके साथ ही साथ एकाधिकार इत्यादि—स्वयं दृष्टिगोचर

हो जाती हैं। सन् १९१९ के तुर्क और स्वयं कमाल पाशा सन् १७८९ के चलन को मानते थे। इसलिए उन्हें बीसवीं शताब्दी के समय में १९वीं शताब्दी के विचारों से काम लेना पड़ा। इससे स्पष्ट है कि ऐसी दशा में लक्ष्य वही रहा जो पहले था, परन्तु कार्य-प्रणाली बदल गई। केवल इतना ही नहीं, वरन् उन्हें स्वतन्त्रता, विज्ञान, बुद्धिमत्ता, उन्नति और एक ऐसी जाति के साथ इन विचारों का सामंजस्य करना पड़ा जो इन नवीनताओं को न केवल मानने से लाचार थी, वरन् उसके लिए वे उपयुक्त भी न थे। अतएव एक फिर मध्य श्रेणी के तुर्कों को इस बात के लिए बाध्य करना पड़ा कि वे बुद्धिमत्ता, उन्नति और स्वाधीनता के इच्छुक बनें।

फिर भी जब इन सुधारकों ने लड़खड़ाते हुए उस्मानी साम्राज्य के स्थान पर नवीन प्रजातन्त्र शासन-प्रणाली स्थापित करनी चाही तो उन्हें सैकड़ों वर्ष के पुराने चलनों को छोड़ना पड़ा। उस समय टर्की में एक छोटे से शिक्षित वर्ग के अतिरिक्त बाक़ी सब लोग असंगठित थे। उस पर धार्मिक लोग, जिनकी महत्ता केवल इस बात पर निर्भर थी कि देश में धार्मिक रंग में डूबा हुआ समाज और उसके साथ प्राचीन इस्लामी चलन और विधान प्रचलित रहें, अच्छी तरह अपनी जड़ जमाये हुए थे। जाति के सुधारक इस समाज की ईश्वर-भक्ति को तो आदर की दृष्टि से देखते थे,

परन्तु पुराने चलन और अन्धविश्वास उनकी दृष्टि में काँटे के समान खटकते थे और वे उनको तुर्कों के जीवन का एक प्रकार का लांछन समझते थे; क्योंकि ये सब बातें तुर्कों के नागरिक जीवन के लिए उत्तम विधान बनाने में रुकावटें डालती थीं। इन सब बातों के अतिरिक्त मूर्ख किसानों की संख्या भी बहुत थी जो शताब्दियों से स्वेच्छाचारी शासकों की अधीनता में जीवन व्यतीत करती चली आ रही थी। वे राजा को पृथ्वी पर ईश्वर का अवतार मानते थे। उन्हें इस बात का बिलकुल ज्ञान न था कि नागरिक स्वतन्त्रता भी कोई वस्तु है और यह कि वे स्वयं भी देश के रचनात्मक कार्यों में भाग ले सकते हैं। इस्लाम की इस शिक्षा ने कि भाग्य पर भरोसा रखना चाहिए, उन्हें और भी शासन की दासता का पाठ पढ़ा रखा था। इसलिए उन्होंने पूर्ण रूप से अपने को शासन की शरण में छोड़ दिया था। शताब्दियों तक होनेवाले अत्याचारों और शोषणों ने उन्हें निर्धनता के कूप में ढकेल रखा था, परन्तु समय-समय पर गृह-युद्ध उन्हें और भी नष्ट-भ्रष्ट करते रहते थे। भयानक पहाड़ियों और बंजर भूमि ने उन्हें प्रकृति की देन से पहले ही निराश कर दिया था। इसलिए वे कभी भूलकर भी इस ओर ध्यान न देते थे कि बनावटी और अच्छे तरीक़े काम में लाने से उनका देश उपजाऊ हो सकता है। कहने का तात्पर्य यह है कि यही वे लोग थे जिनके हृदयों में भाषण देने, वोट

देने, प्रायोगिक कार्य करने, खेती में उन्नति करने और अपनी सन्तानों को शिक्षा देने की अभिलाषा उत्पन्न करनी पड़ी। इसमें कोई सन्देह नहीं कि तुर्कों ने अपनी ओर से इन बातों को आरम्भ नहीं किया और न कभी सुधारों और परिवर्तनों की ही माँग की। इसीलिए उनके सन्देहों को दूर करने के लिए बार-बार सुधारों से होनेवाले लाभों को समझाना पड़ा। इन्हीं कारणों से हम कह सकते हैं कि टर्की के राजनीतिक यन्त्र को पहले लोगों को अपनी गति से परिचय कराना पड़ा।

स्वयं अतातुर्क को अपने आलोचकों को उत्तर देते हुए कहना पड़ा कि राष्ट्रीय संस्था होना ही इस बात का प्रमाण है कि तुर्क-जाति अपनी आवश्यकताओं और उद्देश्यों के सम्बन्ध में पूर्णरूप से एकमत है। एक सभा में भाषण देते हुए उन्होंने यह भी बताया कि विभिन्न दलों के हित में एकता पैदा की जा सकती है, इसलिए उनको विभिन्न दलों में विभाजित करना उचित नहीं। इसी भाषण में उन्होंने यह भी कहा कि टर्की के नागरिक जिस संस्था में सम्मिलित होते हैं, उसे हम राष्ट्रीय संस्था का नाम देते हैं। इसलिए तुर्कों को नागरिकता की शिक्षा देने में यह संस्था स्कूल का काम देगी और इस प्रकार तुर्कों में सच्ची एकता पैदा हो जायगी। इसी भाषण में आगे चलकर उन्होंने कहा कि वर्तमान टर्की में उन कठिनाइयों का अन्त हो चुका है जिन्होंने सन् १९१४ में आस्ट्रिया-हंगरी

के या उस्मानी सुल्तानों के उन प्रारम्भिक प्रयत्नों को निरर्थक कर दिया था जिनसे वह अपने यहाँ प्रजातन्त्र राज्य स्थापित करना चाहते थे। यह बात सभी मानते हैं कि वर्तमान टर्की उन धार्मिक और जातीय उपद्रवों से दूर है जो भारतवर्ष को प्रजातन्त्र-राज्य-प्रणाली की ओर बढ़ने से रोके हुए हैं। टर्की पार्टी के झगड़ों से बिलकुल दूर तो है, परन्तु इसका यह अर्थ नहीं कि वह पूँजीवाद और निर्धनता के बखेड़ों से भी दूर है। अंकारा के एक मन्त्री और एक ऐसे किसान के बीच—जो नगर के बाहर केवल दो एकड़ पथरीली भूमि की खेती पर अपना जीवन व्यतीत करता है—धनाढ्यता और निर्धनता का उतना ही अन्तर है जितना कि पाश्चात्य देशों के किसी मन्त्री और किसान की हैसियत में। फिर भी टर्की में बहुत अधिक धनवान् लोग कम हैं। जहाँ तक सरकारी कर्मचारियों का सम्बन्ध है, उनकी संख्या भी अधिक नहीं है। जन-संख्या का केवल २० प्रतिशत भाग उद्योग-धन्धों में लगा हुआ है, शेष ८० प्रतिशत अब भी खेती-बारी करता है। नगरों और उनके आस-पास के गाँवों में बुद्धिमान् बालकों के लिए उच्च शिक्षा के द्वार खुले हुए हैं और लोग उन्नति करके ऊँचे से ऊँचे पद पर पहुँच सकते हैं। तुर्क अपने देश की राष्ट्रीय संस्था से बहुत सन्तुष्ट हैं। उनका कहना है कि हमारी-जैसी जाति के लिए विभिन्न संस्थाएँ निरर्थक हैं।

यथार्थ में, इस सम्बन्ध में, तुर्कों ने नवीन प्रजातन्त्र-जीवन के दुर्बल अंश को बलवान् बनाकर उसको बहुत ही कठिन समस्या को हल कर दिया है। टर्की में केवल एक संस्था के होते हुए भी, तुर्कों ने अपनी स्वाधीनता को बनाये रक्खा, इसका मुख्य कारण यह है कि समस्त तुर्कों का सामाजिक उद्देश्य एक है। यह बात साधारण रूप से मानी जा चुकी है कि पाश्चात्य देशों में पार्टी-मतभेद उसी समय होता है जब जाति के सामाजिक जीवन में कोई गहरा मतभेद पैदा हो जाता है (जैसे फ्रांस में कम्यूनिस्टों के वामपक्ष और कंजरवेटिवों के दक्षिणपक्ष में इतना भयंकर मतभेद पैदा हुआ कि फिर उसे मिटाना कठिन हो गया)। ऐसी दशा में केवल पार्टी-संगठन ही नहीं, वरन् हर प्रकार का प्रजातन्त्र-संगठन भी निरर्थक सिद्ध हो जाता है। क्या इससे यह परिणाम निकाला जा सकता है कि तुर्कों ने प्रजातन्त्र-शासन-प्रणाली का एक नवीन रूप में अध्ययन किया है अर्थात् देश की राष्ट्रीय संस्था ने पहले देश के भीतर एकता की नींव डाली और फिर लोगों को स्वाधीनता का पाठ पढ़ाया? यह समस्या विचारणीय है; क्योंकि देखने में यह सरल नहीं प्रतीत होती। तुर्कों की एकता का एक कारण यह है कि उनका सामाजिक उद्देश्य टर्की के भीतर नवीन सिद्धान्तों के अनुसार एक समृद्धिशाली राष्ट्रीय प्रजातन्त्र राज्य स्थापित करना था, परन्तु दूसरी ओर

इससे भी अधिक महत्त्वपूर्ण कारण यह है कि इस समय भी पाश्चात्य देशों की अत्यधिक औद्योगिक उन्नति की समस्याएँ तुर्कों के सम्मुख हैं।

इन सब बातों के अतिरिक्त यदि किसी देश में दो या दो से अधिक पार्टियों के होने से सामाजिक उलटफेर तथा पार्टियों का संघर्ष और दाँवपेंच होने लगते हैं तो केवल एक ही पार्टी के होने से दूसरी बुराइयाँ पैदा हो जाती हैं, जैसे एकाधिकार ( मोनोपली ) जिससे अहंकार और स्वच्छन्दता पैदा हो जाती है। इन्हीं बुराइयों के कारण आगे चलकर जनता की यथार्थ आवश्यकताओं की ओर उदासीनता बर्ती जाने लगती है और इस पार्टी के पदाधिकारी अपना एक अलग वर्ग बना लेते हैं। इसके अतिरिक्त सम्बन्धियों की अनुचित रियायत और राजनीतिक कार्यकर्ता भी अनुचित रूप से राजकाज में हस्तक्षेप करने लगते हैं। कमाल पाशा एकाधिकार ( मोनोपली ) के दोषों से भली भाँति परिचित थे। इसलिए उन्होंने सन् १९३१ में एक दूसरी पार्टी का संगठन आरम्भ किया और इस कार्य के लिए फ़तही बे को नियुक्त किया। इस पार्टी का नाम 'स्वतन्त्र विचार-पार्टी' रक्खा गया और कुछ ही समय बाद इस पार्टी में कट्टर कंजरवेटिवों की भरमार हो गई। इसका यह परिणाम हुआ कि कुछ समय बाद हिंसा और गृह-युद्ध आरम्भ हो गया। इसलिए यह नई संस्था जल्दी ही

तोड़ दी गई। इससे ज्ञात होता है कि कमाल पाशा ने टर्की में दूसरी पार्टी की आवश्यकता को समझा था।

एक दूसरा प्रयोग सन् १६३६ में किया गया अर्थात् राष्ट्रीय संस्था के ही इन सदस्यों को विरोधी पार्टी का सदस्य बना दिया गया जिससे वे लोग शासन की नीति और कार्यवाहियों पर टीका-टिप्पणी करके उसे उचित सम्मति दें। पाश्चात्य देशों में स्वतन्त्र पार्टी की गवर्नमेंट ऐसा करती है कि शासन की कार्यवाहियों के बारे में जनता की अनुमति का पता लगाने और नेताओं को बदलने के लिए एक नियत अवधि के पश्चात् नियमानुसार चुनाव होता है। परन्तु टर्की का विरोधी दल के बना देने से उद्देश्य पूर्ण नहीं हो सकता।

अभी इस बारे में कोई भविष्यवाणी नहीं की जा सकती कि कमाल पाशा की स्थापित की हुई राजकाज-प्रणाली स्थायी है या नहीं। परन्तु इसमें कोई सन्देह नहीं कि उनके उत्तराधिकारी असमत इनूनू महान् कूटनीतिज्ञ और संगठनकर्ता हैं! ये केवल अपने पथप्रदर्शक की नीति पर ही नहीं चल रहे हैं, वरन् उन्हीं के सिद्धान्तों के अनुसार कृषि, औद्योगिक तथा शिक्षा के कार्यों को भी करना चाहते हैं। परन्तु अब यह प्रश्न उठता है कि वह राज्य-प्रणाली—जो कमाल पाशा के व्यक्तित्व से सम्बन्ध रखती है—भविष्य में इतनी सफल रहेगी या नहीं और तुर्क अब भी उतने ही उत्साह

के साथ उसे सफल बनाने में तत्परता दिखावेंगे या नहीं। प्रयत्नों में शिथिलता आ जाने के कुछ लक्षण प्रतीत होने लगे हैं, क्योंकि टर्की के बहुत से कारखानों को यह शिकायत होने लगी है कि कमाल अतातुर्क की मृत्यु के पश्चात् ठेकों की जाँच-परताल में बहुत समय लगने लगा है जिसका सारा उत्तरदायित्व सरकारी कर्मचारियों पर है। फिर भी टर्की के वर्तमान शासन-प्रबन्ध के बारे में उस समय तक कोई धारणा निश्चित नहीं की जा सकती, जब तक कि उसकी आन्तरिक दशा का पूर्ण ज्ञान न हो। परन्तु इतना तो कहा ही जा सकता है कि एक ही पार्टी के सरकारी कर्मचारियों की कार्यवाही को कमाल पाशा ने अपनी आश्चर्यजनक कार्यपटुता और तत्परता से दबा रखा था। परन्तु उनकी मृत्यु होते ही नौकरशाही का यह स्वाभाविक दोष फिर प्रकट हो गया। अतएव हमें यह कहना ही पड़ता है कि टर्की एक संगठित आर्थिक प्रबन्ध के साथ-साथ स्वतन्त्र शासन-सत्ता के प्रश्न को हल करने में उतना सफल न हो सका जितना कि साधारणतया समझा जाता है। इसके अतिरिक्त न तो शासन-प्रबन्ध और उसका ध्येय ही इतना पुष्ट है कि उस पर उन्नति और चुनावों का प्रभाव न पड़ सके। फिर भी टर्की का भविष्य सरकारी नौकरों, वैज्ञानिकों और व्यवसायियों की उन सन्तानों पर निर्भर है जो इस समय स्कूलों तथा कालेजों में अध्ययन कर रही हैं। यदि कमाल की क्रान्ति ने तुर्कों में बौद्धिक परिवर्तन

कर दिया है तो इस बात का पूर्ण विश्वास है कि उनकी मृत्यु के पश्चात् भी टर्की की नवीन व्यवस्था नष्ट न होगी।

---

# अध्याय ८

## सामाजिक क्रान्ति

केवल देश की राजनीतिक उन्नति देखकर ही किसी क्रान्ति की सफलता या विफलता का ज्ञान नहीं प्राप्त किया जा सकता। शासन-प्रबन्ध बदल जाता है। एक के बाद दूसरे शासक आते और चले जाते हैं। और बहुधा शासन-सत्ता के विधान में भी महान् परिवर्तन हो जाते हैं; परन्तु देश के राष्ट्रीय जीवन पर बिलकुल प्रभाव नहीं पड़ता। मिधत पाशा और नवयुवक तुर्कों के राजनीतिक सुधारों के सारे मनसूबे केवल इस कारण मिट्टी में मिल गये कि उस समय तुर्कों के जीवन में सामाजिक और आर्थिक परिवर्तन करना कठिन था। कमाल की क्रान्ति से तुर्कों को दो महत्त्वपूर्ण पारितोषिक मिले हैं—एक तो विधान और दूसरा चुनाव करने का नियम। सच पूछो तो इन्हीं दो बातों पर तुर्कों के वर्तमान जीवन की दृढ़ नींव पड़ी है। इसलिए अकाट्य रूप से हम यह कह सकते हैं कि यद्यपि मिधत पाशा के विधान को हटा देने से उनके सारे प्रयत्नों पर पानी फेरा जा सकता था। परन्तु यदि

सारे टर्की का राजनीतिक ढाँचा परिवर्तित कर दिया जाय तो भी कमाल पाशा टर्की के लिए जो कुछ कर गये हैं, वह अपने स्थान पर अमिट रहेगा।

समाज को नितान्त सांसारिक बना देने से टर्की की प्राचीन विशेषताओं में स्पष्टतया परिवर्तन हुए ; क्योंकि प्रत्येक समाज के धार्मिक विचारों का सम्बन्ध प्रत्येक व्यक्ति के धार्मिक विश्वास और उसकी राष्ट्रीय भावना से होता है। बीसवीं शताब्दी तक टर्की के सारे नागरिक नियम विशेष रूप से वे थे जो उत्तराधिकार, सम्पत्ति और वंश पर प्रभाव डालते थे। वे कुरानशरीफ़ और शरीयत के अनुसार बनाये गये थे और धर्म के ज्ञाता ही उनके बारे में न्याय करते थे। सुधारों के पश्चात् पाश्चात्य योरप में राजनीति और धर्म दोनों को भिन्न मान लिया गया और केवल वसीयतनामों की सरकारी तसदीक़ और तलाक़ के प्रश्नों के अतिरिक्त धर्म का राजनीति से कोई सम्बन्ध न रहा. यद्यपि प्राचीन काल में विवाह और वसीयत के सारे मामलों का धार्मिक संस्थाओं में निर्णय होता था। इन सब बातों को देखते हुए यह बात बड़ी सरलता से समझ में आ सकती है कि १० वर्ष की कम अवधि में टर्की की राजनीति से धर्म को पृथक् कर देना कोई साधारण बात न थी, क्योंकि इस कार्य के करने में योरप को शताब्दियाँ लग गई थीं और बड़ी-बड़ी क्रान्तियों के पश्चात् यह बात पैदा हो सकी थी। परन्तु

यह कमाल पाशा की स्वाभाविक योग्यता और उच्च विचारों का ही परिणाम था कि शताब्दियों में होनेवाले कार्य को उन्होंने १० ही वर्ष में पूरा कर दिया, यद्यपि तुर्कों ने उनका महान् विरोध किया और उन्हें अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। कुर्दों ने इसी कारण कई बार विद्रोह किया और सन् १९३१ में धर्म के नाम पर मरने और जीनेवाले प्राचीन विचार रखनेवालों (कंजर वेटर्स) ने पूर्ण विरोध किया।

फिर भी इस कार्य में इतनी कठिनाइयाँ नहीं पैदा हुईं जितनी कि विचार की जाती थीं; क्योंकि धर्म की ओर तुर्क कभी आवश्यकता से अधिक नहीं दौड़े। टर्की की भूमि में कभी महात्माओं, धार्मिक कवियों और वैज्ञानिकों ने जन्म नहीं लिया। परन्तु एक समय तक उन्होंने इस्लामी सेना और इस्लाम के रक्षकों की सहायता अवश्य की है; क्योंकि आरम्भ में मुसलमानों में देशों को विजय करने की तीव्र इच्छा थी और वे नये देशों को विजय करके उनमें इस्लामी राज्य-सत्ता स्थापित कर देते थे।

इस्लाम कमाली आन्दोलन के मार्ग में आन्तरिक और बाह्य रूप से कठिनाइयाँ उत्पन्न कर रहा था। बाह्य रूप से वह स्वशासित और देश-प्रेमी टर्की को उस इस्लामी संसार से बाँधना चाहता था जिस पर कुछ समय पूर्व उस्मानी साम्राज्य की पताका फहरा चुकी थी। अब यदि कमाल

अतातुर्क इस्लामी नियम के अनुसार शासन करते तो यह भय था कि कहीं राज्य का स्वप्न उन्हें एकाधिकार शासन के लोभ में न फँसा दे। वे इस लोभ को दूर ही रखने का दृढ़ निश्चय कर चुके थे, क्योंकि ऐसा करने में यह भी भय था कि कहीं फिर विदेशी राज्यों से संघर्ष न पैदा हो और तुर्कों का लोकप्रिय सरकार में जो दृढ़ विश्वास है, उसमें शिथिलता न आ जाय। इसी भावना पर कमाल पाशा का अनुभव निर्धारित था। इन सब बातों को ध्यान में रखकर सन् १९२४ में "ख़िलाफ़त" का अन्त कर दिया गया, यद्यपि उस्मानी सुल्तानों को एक समय तक इस्लामी संसार के ख़लीफ़ा होने का अधिकार प्राप्त रहा। "ख़िलाफ़त" के अन्त हो जाने के पश्चात् टर्कों का इस्लामी संसार से बचा-खुचा सम्बन्ध भी टूट गया।

इस समय धर्म को राजनीति से पृथक् करने का प्रयत्न किया गया। "ख़िलाफ़त" के अन्त के साथ-साथ इस्लामी कोड के वज़ीर के पद का भी अन्त कर दिया गया और मकतब, धार्मिक न्यायालय, ट्रस्ट, मोहताजख़ाने इत्यादि उसके प्रबन्ध से हटा लिये गये। सब इस्लामी मदरसे—जिनकी संख्या उस्मानी सुल्तान के समय में बहुत थी—और सारा शिक्षा-विभाग शिक्षा-मन्त्री को सौंप दिया गया। केवल अज़ान देनेवाले और नमाज़ पढ़ानेवालों को धार्मिक वस्त्र पहनने की आज्ञा दी गई और सन् १९३५ में समस्त

کمال اتا ترک جدید حروف کا نمونہ سکھا رہے ہیں

**कमाल अतातुर्क आधुनिक अक्षरों का नमूना दिखा रहे हैं**

प्राचीन वेषभूषा को नहीं त्यागा है। वे अब भी चूड़ीदार पाजामा पहनती हैं और मुँह पर नक़ाब डाले रहती हैं। अतातुर्क ने परदे के विरुद्ध कोई क़ानून बनाना उचित न समझा और इस बात को स्त्रियों की इच्छा पर ही छोड़ दिया, क्योंकि स्त्रियों की स्वाधीनता की मुख्य समस्या से परदे का प्रश्न कम महत्त्वपूर्ण समझा गया और कमालपाशा को इस बात का भी पूर्ण ज्ञान था कि इस कार्य के करने में उन्हें ऐसे मार्ग से जाना पड़ेगा जिसमें अन्धविश्वास और प्राचीन विचार रखनेवालों के विरोध की बारूदी सुरंगें बिछी हुई हैं। इसलिए उन्होंने प्रत्यक्ष रूप से इस समस्या को सुलझाने का प्रयत्न नहीं किया।

अभी तक स्त्रियों को विवाह, उत्तराधिकार और सन्तान आदि के बारे में केवल शरीयत के अधिकार प्राप्त थे, इसलिए वे स्वयं इस प्रकार के शरीयत के प्रतिबन्धों को दूर करना चाहती थीं। कमाल पाशा ने स्त्रियों की स्वाधीनता के लिए प्रत्यक्ष रूप से तो कोई नियम नहीं बनाया, परन्तु सन् १९२६ में शरई क़ानूनों के स्थान पर स्विट्ज़रलैंड के दीवानी क़ानूनों को लागू करके उन्होंने स्त्रियों के अधिकारों को बहुत बढ़ा दिया। नये क़ानूनों के अधीन बहु-विवाह की मनाही हो गई। निकाह की रीति को धार्मिक रीति से निकालकर सामाजिक रीति में रख दिया गया। स्त्रियों को सम्पत्ति और उत्तराधिकार के

अधिकार भी पुरुषों के समान मिलने लगे और क़ानून की दृष्टि से उनका ट्रस्टी बनना भी ठीक समझा जाने लगा। अगले दस वर्षों में शासन ने कार्यरूप में परिणत करके यह दिखला दिया कि वह स्त्रियों को काग़ज़ी स्वतन्त्रता के स्थान पर यथार्थ स्वतन्त्रता दिलाना चाहता है। सन् १९३० में स्त्रियों को वोट देने और म्युनिसिपल बोर्डों की मेम्बरी का अधिकार प्राप्त हो गया और ४ वर्ष के पश्चात् उसको राष्ट्रीय चुनाव में भी मत देने का अधिकार मिल गया। इन राजनीतिक अधिकारों के अतिरिक्त उन्हें सामाजिक और आर्थिक अधिकार भी दिये गये। यही कारण है कि आज टर्की में कदाचित् ही कोई ऐसा सिविल विभाग हो जिसमें स्त्रियाँ काम न कर रही हों। इस समय वे वर्कशापों, फ़ैक्टरियों, दूकानों और दफ़्तरों में पुरुषों के साथ-साथ काम करती हुई दिखाई देती हैं और उन्हें पुरुषों के बराबर काम करने पर उन्हीं के बराबर वेतन भी दिया जाता है। किसानों की स्त्रियाँ अपने परिश्रम के कारण सदैव नगर की स्त्रियों से अधिक स्वतन्त्र रहीं, इसलिए इन सुधारों से उनकी दशा में कोई विशेष परिवर्तन नहीं हुआ, परन्तु धीरे-धीरे बहु-विवाह की प्रथा के उठ जाने से यह आशा की जाती है कि जब खेतों में काम करनेवाली स्त्रियों की कमी दिखाई देगी तो किसान क़हवा और घरों में हुक्का पीने के स्थान पर अपना अधिक समय खेती-बारी में लगायेंगे।

सम्भव है, पाश्चात्य देशों की स्त्रियों को तुर्क स्त्रियों की वर्तमान स्वतन्त्रता की महत्ता को समझने में कठिनाई हो; क्योंकि वे कई पीढ़ियों से उनसे अधिक स्वतन्त्र जीवन व्यतीत करती चली आ रही हैं और अपने अधिकारों और कर्तव्यों से भली भाँति परिचित हैं। फिर भी यदि कोई उन स्त्रियों से पूछे—जिन्होंने बहु-विवाह के समय की कठिनाइयों और घरेलू झगड़ों के कष्टों का सहन किया है—तो वे एकस्वर में यही कहेंगी कि वर्तमान टर्की में स्त्रियों को नरक से निकालकर स्वर्ग में रख दिया गया है। आधुनिक टर्की का यह एक आश्चर्यजनक और प्रशंसनीय कार्य है कि वहाँ दस वर्ष में ही स्त्रियों के जीवन में कायापलट कर दी गई है।

यदि स्त्रियों की स्वाधीनता के साथ-साथ शिक्षा-विभाग में पूर्ण सुधार न किये जाते तो बहुत सम्भव था कि इस कार्य में अधिक सफलता न होती। इस अवसर पर शासन-सत्ता को सांसारिक साँचे में ढालकर अन्य नवीनता लाई गई। अल्पसंख्यकों की पाठशालाओं के अतिरिक्त समस्त धार्मिक पाठशालाएँ तोड़ दी गईं और कुछ निजी स्कूलों को छोड़कर शिक्षा-मन्त्री की देखरेख में उनके स्थान पर सरकारी स्कूल खोले गये, जहाँ धार्मिक शिक्षा के साथ अन्यान्य विषयों में अनिवार्य शिक्षा निःशुल्क दी जाने लगी। ७ वर्ष से १२ वर्ष की आयु के बालक प्राइमरी स्कूलों में पढ़ते हैं। इन स्कूलों का कोर्स केवल ३ वर्ष का होता है,

जहाँ ८ लाख बालक अर्थात् टर्की के ५३ प्रतिशत बालक एक साथ शिक्षा प्राप्त करते हैं।

यदि आपको मध्य पठार की यात्रा करने का अवसर मिले तो यह बात स्वयं आपकी समझ में आ जायगी कि अभी तक वहाँ शिक्षा-सम्बन्धी सुविधाएँ क्यों कम हैं? क्रान्ति से पहले वहाँ के छिन्न-भिन्न गाँवों में कदाचित् ही कोई स्कूल दिखाई देते थे और इस समय भी यदि किसी गाँव में कोई नया स्कूल खोला जाता है तो गाँववाले अपने सामान और अपने ही परिश्रम से स्कूल की इमारत खड़ी करते हैं। जिन गाँवों में स्कूल नहीं हैं वहाँ के बच्चों को दूरी और मार्ग की कठिनता के कारण समीप के शिक्षा-केन्द्र तक पहुँचना कठिन हो जाता है। फिर २० वर्ष के भीतर इतने अध्यापकों का तैयार होना भी कठिन था कि एक ही समय में वे १ लाख ८० हज़ार विद्यार्थियों को शिक्षा दे सकें। इसलिए इस कठिनाई को दूर करने के लिए गश्ती पाठशालाएँ खोलनी पड़ीं। यूनिवर्सिटी के विद्यार्थियों की पहले ही सरकार से यह शर्त हो जाती है कि वे निःशुल्क शिक्षा प्राप्त करने के बदले में शिक्षा समाप्त करने पर एक नियत समय तक अवैतनिक शिक्षा देंगे। इसलिए वे किसी गाँव में नियुक्त कर दिये जाते हैं जहाँ बालकों को सप्ताह में दो दिन शिक्षा देते हैं। सप्ताह के शेष चार दिन वे बारी-बारी से अपने २० मील के क्षेत्र के दो और गाँवों में व्यतीत

करते हैं। इन पाठशालाओं में केवल एक कमरा होता है जहाँ विभिन्न कक्षाओं के विद्यार्थी एक साथ शिक्षा पाते हैं। छोटे बालकों को अक्षर, साधारण हिसाब-किताब और लिखना-पढ़ना सिखाया जाता है। यदि कोई निरीक्षण करने आता है तो ये बालक ब्लैक बोर्ड पर या पाठशाला के दरवाज़े के सामने रेत ही पर तुर्की भाषा के अक्षरों में बड़े परिश्रम से स्वागतम् लिखने का प्रयत्न करते हैं। इन बालकों को आगे चलकर औद्योगिक स्कूल में शिक्षा प्राप्त करने के अधिक अवसर नहीं मिलते।

बड़े-बड़े शहरों में प्राइमरी स्कूल, औद्योगिक संस्थाएँ और कालेज बिलकुल पाश्चात्य ढंग पर स्थापित किये गये हैं, जहाँ सब प्रकार की साहित्य तथा कला-कौशल-सम्बन्धी शिक्षा दी जाती है। प्राइमरी स्कूलों की तुलना में विश्व-विद्यालय यथेष्ट उन्नति प्राप्त हैं जहाँ से प्रतिवर्ष हज़ारों सरकारी कर्मचारी, इंजीनियर, डाक्टर, अध्यापक और प्रोफ़ेसर शिक्षा समाप्त करके निकलते हैं। इस्तमबोल-विश्वविद्यालय, जो प्राचीन काल में एक धार्मिक संस्था थी, सन् १९३३ में बड़े परिवर्तनों के पश्चात् वर्तमान दशा को पहुँचा। अंकारा-विश्वविद्यालय में क़ानून, डाक्टरी इतिहास आदि विषयों के विभाग खुल गये हैं। परन्तु अभी तक यह विश्वविद्यालय पूर्णरूप से स्थापित नहीं हो सका है। विश्वविद्यालयों के अतिरिक्त और मुख्य-मुख्य

संस्थाएँ भी हैं, जैसे शिक्षा-सम्बन्धी कृषि और राजनीति आदि। राजनीतिक संस्था में उन विद्यार्थियों को—जिन्होंने शिक्षा पूर्ण कर ली हो—अतिरिक्त शिक्षा प्राप्त करनी पड़ती है, यदि वे सरकारी पदों पर नियुक्त होना चाहते हों।

इन संस्थाओं में से अधिक संस्थाएँ अंकारा में हैं, इसलिए वहाँ टर्की के आधुनिक निर्माण-कला के नमूने दिखाई देते हैं। स्कूलों की इमारतें अमली तौर पर बनाई गई हैं और उनमें अधिक कारीगरी दिखाने का प्रयत्न नहीं किया गया है। स्कूलों के कमरे चौड़े, साफ़-सुथरे, प्रकाश-पूर्ण और हवादार होते हैं और उनके सामने चौड़ा बरामदा भी होता है। ये इमारतें सादी, परन्तु यथेष्ट आकर्षक हैं। सम्भव है, ऐसी इमारतें दूसरे देशों के नगरों में भी न हों, परन्तु अंकारा में इनके कारण एक विशेष सौन्दर्यता आ गई है। क्रान्ति से पहले अंकारा एक बहुत ही उजाड़ तथा सुनसान स्थान था। परन्तु १० ही वर्ष के भीतर, जहाँ पहले केवल टूटे-फूटे दुर्गों और रेलवे लाइन के समीप कुछ टूटे-फूटे गृहों के अतिरिक्त और कुछ भी न था, अब वहाँ एक बहुत ही भव्य और विशाल नगर बस गया है जो संसार में एक अन्तरराष्ट्रीय प्रदर्शिनी की सी हैसियत रखता है। वहाँ के मन्त्रियों के नवीन गृह, औद्योगिक और इंजीनियरिंग की संस्थाएँ एवं अतातुर्क की महलवाली चौड़ी पहाड़ी पर बने हुए फ्रांस, ब्रिटेन और अमेरिका के सुन्दर बँगले और

दो एक पर राष्ट्रों के मन्त्रियों के कार्यालय—जो उनकी आधुनिक निर्माण-कला के अनुपम उदाहरण हैं—विशेष रूप से देखने योग्य हैं।

यदि अतातुर्क ने वर्णाक्षरों के सुधार का निश्चय न कर लिया होता तो तुर्कों को शिक्षा-संसार में इतना आगे बढ़ाना कठिन हो जाता। सन् १९२८ तक तुर्क अरबी-वर्णाक्षरों का प्रयोग करते थे जिसको थोड़ा बहुत परिवर्तन करके तुर्की वर्णावली बना लिया गया था। यह वर्णावली अपनी सुन्दरता और सरलता के विचार से उन लोगों के लिए एक प्रकार से शार्टहैंड का काम देती थी जो इससे भली प्रकार परिचित होते थे। ( सुधारों के १० वर्ष पश्चात् आज भी टर्की के बहुत से कारबारी लोग और सरकारी नौकर इन्हीं सुन्दर वर्णाक्षरों में बड़ी जल्दी लेख आदि लिखते दिखाई देते हैं। परन्तु इस वर्णावली को सीखना बहुत कठिन है। इसी कारण तुर्कों की एक बड़ी संख्या अपढ़ रह जाती थी। यह वर्णावली टर्की के प्राचीन समय की स्मारक थी और कमाल पाशा इस स्मृति-चिह्न और मूर्खता को मिटाना चाहते थे। इसलिए उन्होंने नवम्बर सन् १९२८ से लैटिन के वर्णाक्षरों को प्रचलित कर दिया। सारे देश में प्रौढ़ों की शिक्षा के स्कूल खोल दिये गये, जहाँ लगभग १० लाख स्त्रियों और पुरुषों ने वर्णाक्षर सीखने आरम्भ कर दिये। १९३९ में सारे स्कूलों में नये वर्णाक्षरों

में शिक्षा दी जाने लगी। सारी पुस्तकें, परीक्षाओं के पर्चे और नोटिसें इस वर्णावली में छपने लगीं। कमाल पाशा ने स्वयं एक ब्लैक बोर्ड लेकर, गाँव-गाँव में जाकर लोगों को नये वर्णाक्षरों की शिक्षा दी। इसके पश्चात् १० ही वर्ष में लोग नवीन वर्णाक्षरों से भली भाँति परिचित हो गये।

शिक्षा-केन्द्रों और प्रचार-गृहों की सहायता से—जो लगभग सब प्रान्तों, शहरों और क़स्बों में हैं और जिन्हें राष्ट्रीय संस्था चलाती है—प्रौढ़ों को वर्णावली सीखने में बड़ी सुविधा हुई। इन स्थानों पर बहुधा साहित्यिक व्याख्यान, राष्ट्रीय गाने, ऐतिहासिक और शिक्षा-सम्बन्धी वाद-विवाद, खेल-तमाशे और राष्ट्रीय उत्सव होते हैं। यहाँ पर लोगों को पढ़ने के लिए समाचारपत्र, मासिक पत्रिकाएँ और पुस्तकें मुफ़्त मिलती हैं और उनके मनोरंजन के लिए एक रेडियो भी लगा रहता है; क्योंकि अब भी सम्पूर्ण टर्की में केवल १० हज़ार घर ऐसे हैं जिनमें रेडियो लगे हुए हैं। टर्की में सिनेमाघरों की संख्या अब भी २०० से अधिक नहीं बढ़ी है। इस्तमबोल और स्मर्ना में उनकी संख्या दूसरे शहरों के अपेक्षा अधिक है। प्रचार-गृहों में शिक्षा-सम्बन्धी और प्रचार ( प्रोपेगेंडा ) की फ़िल्में दिखाई जाती हैं और लगभग प्रत्येक प्रचार-गृह में सिनेमा का सामान वर्तमान रहता है, परन्तु राष्ट्रीय संस्था इस प्रकार के प्रचार की अपेक्षा

जनता के संसर्ग और प्रत्यक्ष रूप से राय देने को अच्छा समझती है। गवर्नर और उनके डिपुटी नियत समय में दौरा करके प्रजा के कष्टों को ज्ञात करते हैं। इस प्रकार शासक और शासित में एक विशेष सम्बन्ध बना रहता है। इसका उदाहरण स्वयं अतातुर्क ने गाँव-गाँव में श्यामपट्ट (ब्लैक बोर्ड) ले जाकर उपस्थित किया था।

अब प्रश्न यह है कि टर्की का साम्राज्य गया। उसके शासन पर धर्म का भी प्रभाव न रहा। तो फिर शिक्षाकेन्द्रों, स्कूलों, राष्ट्रीय संस्था, प्रचार-गृहों और समाचारपत्रों ने उनके स्थान पर कौनसी नवीन बात पैदा की? इसका उत्तर यह है कि इन्हीं अस्त्रों के कारण टर्की के समाज में एकता और समानता पैदा की गई और यही इस बात के भी साक्षी हैं कि कमाल पाशा के सुधार उनकी मृत्यु के पश्चात् भी अपना निर्माण-कार्य पूरा करते रहेंगे। इन्हीं बातों की सहायता से टर्की फूले-फलेगा और उन्नति के शिखर पर चढ़ेगा। शिक्षा, प्रचार तथा प्रेस का मुख्य उद्देश्य यह है कि देश में प्रजातन्त्र-प्रिय, देश-प्रेमी और क्रान्ति-प्रिय मनुष्य उत्पन्न हों। दूसरे शब्दों में तुर्कजाति का ध्येय यह है कि उसका देश अतातुर्क की-सी महान् आत्माओं से कभी खाली न रहे। इन सब विशेषताओं में देश-प्रेम भी मुख्य समझा जाता है। आधुनिक टर्की का इतिहास और भूगोल भी वहाँ के विद्यार्थियों में देश-प्रेम की भावना को कूट-कूटकर भरनी

चाहती है। प्रत्येक अवसर पर तुर्कों को यह समझाने का प्रयत्न किया जाता है कि उनकी जाति में बहुत से गुण विद्यमान हैं। तुर्कों के मस्तिष्क में यह बात अच्छी तरह जम गई है कि शिक्षा तुर्की-भाषा में टर्की के अध्यापकों और तुर्की-पुस्तकों के द्वारा ही होनी चाहिए। प्रत्येक तुर्क टर्की को महत्ता प्रदान करना अपने जीवन का मुख्य ध्येय समझता है। तुर्कों के सम्मुख देश की सबसे बड़ी सेवा यह है कि वे अपने को देश की सेवा के लिए दे दें। राष्ट्रीय संस्था के कार्यक्रम ( प्रोग्राम ) के अनुसार शिक्षा का मापदंड उच्च और उसको जातिसेवा और देशसेवा की भावना से परिपूर्ण होने के अतिरिक्त अन्धविश्वास और विदेशी विचारों से भी मुक्त होना चाहिए।

अब यदि कोई यह पूछे कि क्या इन सब बातों से तुर्कों को मनोवांछित सफलता मिल रही है या केवल जाति को एक नये साँचे में ढालने का बीड़ा उठाना और जातीय सेवा की घोषणा कर देना ही यथेष्ट है ? इस समय तो इस प्रश्न का उत्तर हाँ ही में दिया जायगा। तुर्कों ने राज्य की केंचुल उतारकर उसके स्थान पर आधुनिक प्रजातन्त्र राज्य की नींव डालकर आपको विभिन्न प्रकार की कठिनाइयों और विध्वंसों से बचा लिया है। इसके अतिरिक्त यदि इस समय और दूसरी बातों के विषय में कोई भविष्यवाणी की जाय तो वह समय से पहले होगी, क्योंकि अभी इस बात को

समझना कठिन है कि टर्की की क्रान्ति का—जो अतातुर्क से सम्बद्ध थी—आगे चलकर क्या परिणाम होगा ?

तुर्कों की नवीनताओं को ग्रहण करने की इच्छा और देश-प्रेमी होने के सम्बन्ध में इस स्थान पर दो बातें बतानी आवश्यक हैं। एक तो यह कि उनकी देश-भक्ति, दूसरी जातियों की देश-भक्ति को ठेस नहीं लगाती। तुर्क अपने पड़ोसियों पर न तो कोई अपना अधिकार जताते हैं और न उनकी अल्प संख्या के प्रश्न को लेकर ही किसी प्रकार का झगड़ा मोल लेना चाहते हैं। टर्की में स्कूली पुस्तकों को दूसरी जातियों के विरुद्ध घृणा फैलाने का साधन नहीं बनाया जाता। सांसारिक उन्नति और नवीनताओं की ओर तुर्कों के आकर्षित होने का मुख्य उद्देश्य यह है कि जाति के भीतर वैज्ञानिक ढंग का रहन-सहन आ जाय। परन्तु जो लोग तुर्कों को विधर्मी समझने लगे हैं, वे बड़ी भूल करते हैं। टर्की में माता-पिता को पूर्ण स्वतंत्रता प्राप्त है कि वे अपने बालकों को जैसी चाहें वैसी धार्मिक शिक्षा दें। धार्मिक बातों में राज्य की ओर से किसी प्रकार का हस्तक्षेप नहीं किया जाता। टर्की के वर्तमान प्रेसीडेंट अस्मत अनूनू के बारे में तो यह प्रसिद्धि है कि वे बहुत धार्मिक प्रवृत्ति के हैं और उन्होंने सेना-विभाग में फिर से "पेश इमाम" नियुक्त कर दिये हैं। यह कहना नितान्त असत्य है कि टर्की में नास्तिकता के अजायबघर हैं और वहाँ

استنبول دی مسجد خضرا

**इस्तमबोल की मस्जिद ख़ज़रा**

नास्तिकता का प्रचार किया जाता है और ईश्वर के नाम लेनेवालों को कठिन दंड दिया जाता है। हाँ, तुर्कों के बारे में हम इतना अवश्य कह सकते हैं कि तुर्क एक व्यावहारिक और सांसारिक वस्तुओं में लिप्त जाति है जिसको पारलौकिक उन्नति की अपेक्षा सांसारिक उन्नति की अधिक चिन्ता रहती है। कदाचित् यही कारण हो कि कुछ बूढ़े शासकों को चिन्ता हो चली है और वे बहुधा यह सोचते हैं कि क्या देश-सेवा स्वयं कोई नैतिकता का विधान तैयार कर सकेगी या नहीं? ये लोग ज़ियागोकल्प का कथन याद करते हैं; क्योंकि वे कहा करते थे कि इस्लाम की रक्षा करना बहुत ही आवश्यक है, और उसे देश और समाज के प्रतिबन्धों से स्वतन्त्र होकर केवल पारलौकिक बातों में लगना चाहिए। परन्तु कमाल पाशा ज़ियागोकल्प के इन विचारों के नितान्त प्रतिकूल थे। अब उनकी मृत्यु के पश्चात् बहुत से व्यक्ति यह सोचने लगे हैं कि क्या केवल देश-सेवा ही से काम चल जायगा?

तुर्कों में देशभक्ति का आवेश चाहे कितना ही अधिक क्यों न हो, परन्तु कोई व्यक्ति इस बात से विरोध नहीं कर सकता कि उनके हृदयों के भीतर धार्मिक आवेश अब भी लहरें मार रहा है। इसलिए यह नहीं कहा जा सकता कि प्रजातन्त्र तुर्कों की जड़ें दृढ़ होने के पश्चात् यह दबा हुआ आवेश फिर न प्रकट होगा।

---

# अध्याय ६

## टर्की के गाँव

इसमें तनिक भी सन्देह नहीं कि कमाल की क्रान्ति ने तुर्की की आर्थिक दशा को बहुत लाभ पहुँचाया। परन्तु देश के सब भागों को इससे समान रूप से लाभ न हो सका। जिन देशों में औद्योगिक उन्नति की गति द्रुतगामिनी होती है, वहाँ देश की उन्नति का विशेष भार किसानों पर पड़ता है। १६वीं शताब्दी के अन्त में ब्रिटेन में कृषि की अवनति, दो युद्धों के बीच के समय में अमेरिका के किसानों की कठिनाइयों और लाचारी और इसी प्रकार जापानी और रूसी किसानों की बेचैनी और रुष्टता इस बात का जीता-जागता उदाहरण है कि वहाँ के देहाती क्षेत्रों ने शहरों के लिए बड़े-बड़े त्याग किये हैं। बहुत-सी पूँजी किसानों से ज़बरदस्ती वसूल करके औद्योगिक उन्नति में लगाई गई है। यहाँ केवल टैक्सों का ही प्रश्न नहीं, बल्कि उस धन का भी है जो किसानों से वसूल करके कृषि की उन्नति में नहीं, वरन् औद्योगिक उन्नति में लगाया गया है। इससे अधिक महत्ता श्रमिकों के उस त्याग की है जो उन्होंने पहले-पहल याकोहामा से लेकर पिट्सबर्ग तक की फ़ैक्टरियों में कम से कम मज़दूरी पर काम करके प्रदर्शित की।

औद्योगिक उन्नति के सिद्धान्त से टर्की भी अछूता नहीं है।

यद्यपि औद्योगिक उन्नति से वहाँ के किसानों की दशा पहले की अपेक्षा बहुत अच्छी हो गई है, फिर भी आर्थिक उन्नति से उनको इतना लाभ नहीं पहुँचा, जितना कि औद्योगिक क्षेत्रों में रहनेवालों को हुआ। अतएव टर्की के किसानों की वर्तमान निर्धनता और ऋणता का मुख्य कारण यही है कि टर्की ने औद्योगिक उन्नति में अति शीघ्रता और लोभ से काम लिया। यही कारण था कि औद्योगिक उन्नति की पंचवर्षीय योजना तुर्क किसानों के जीवन की आवश्यकताओं पर छा गई, यद्यपि जनसंख्या का ८० प्रतिशत भाग अब भी खेतीबारी करके जीवन-निर्वाह करता है। इन सब बातों से यह अन्दाज़ा लगाया जा सकता है कि तुर्कों में केवल किसान ही ऐसे हैं, जिन्होंने पिछले २० वर्ष के समय में बहुत ही कम उन्नति की है। यद्यपि भूमि का बटवारा, खेती करने का ढंग, महसूलों की वसूली और अनाज के मोल लेने और बेचने में यथेष्ट सुधार किये गये हैं, फिर भी अन्य क्षेत्रों की अपेक्षा ग्रामीण क्षेत्र बहुत कम उन्नत हैं। क्रान्ति के पश्चात् जब टर्की में इस्लाम का प्रभाव कम हो गया और समाज एक बड़ी सीमा तक सांसारिक रंग में रँग गया तब इससे किसानों को केवल इतना लाभ पहुँचा कि एक बहुत बड़ी सम्पत्ति धार्मिक संस्थाओं से निकलकर किसानों के हाथ लग गई। उस्मानी शासन-काल का सबसे अधिक कष्टदायी टैक्स "अशर" बन्द कर दिया गया, परन्तु उसके स्थान पर मालगुज़ारी, भेड़-टैक्स

और मवेशी-टैक्स लगा दिया गया। इन सब टैक्सों का कुल भार "अशर" के भार से किसी प्रकार कम न था।

जिस समय प्रजातन्त्र राज्य की नींव डाली गई, उस समय टर्की में बड़े-बड़े ज़मींदारों की संख्या कम थी। टर्की के दक्षिणी भाग में ज़मींदारों के पास भूमि के बड़े-बड़े खंड हैं जिनमें कपास या ऐसी ही दूसरी फ़सलें—जो वर्ष में केवल एक बार पैदा होती हैं—बोई जाती हैं। इस भाग में अब भी ज़मींदारों की सख्या अधिक है। टर्की में शासन को किसानों को पड़ी हुई भूमि देने में कोई कठिनाई नहीं होती। इसका यह कारण है कि वहाँ धार्मिक संस्थाओं और शासन की भूमि के अतिरिक्त बहुत सी भूमि ऐसी भी है जो अब तक ग़ैरमज़रूआ है। क्रान्ति के बाद से इस समय तक किसानों को केवल २० लाख एकड़ भूमि बाँटी गई है और अब भी ५० प्रतिशत किसान ऐसे हैं जिनके पास या तो बहुत ही थोड़ी भूमि है या बिलकुल ही नहीं।

क्षेत्र के विचार से हर ज़िले में भूमि के पट्टे भी छोटे और बड़े होते हैं। पिता की मृत्यु के पश्चात् पुत्रों में सम्पत्ति बट जाने से भूमि टुकड़े-टुकड़े हो जाती है जिस पर अलग-अलग खेती करना लाभप्रद नहीं होता। टर्की के पश्चिमी भाग में ८ से लेकर १० एकड़ तक के उपजाऊ भूमि के खंडों पर फलों, मेवों और तम्बाकू की खेती होती है। दक्षिणी भाग में कपास की खेती अधिकतर वही ज़मींदार करते हैं जिनके

पास दो-दो हज़ार एकड़ भूमि के खंड हैं। किसान इन फ़ार्मों पर केवल साझीदार की हैसियत से बटाई पर काम करते हैं और समीप की फ़ैक्टरियों में काम करने से उन्हें कुछ अतिरिक्त आय भी हो जाती है। यद्यपि टर्की के सम्पूर्ण किसानों की दशा ऐसी नहीं है, फिर भी वहाँ छोटे ज़मींदार बहुत हैं। इस स्थान पर यह बता देना भी आवश्यक है कि कपास की खेती से तम्बाकू की पैदावार को भी यथेष्ट लाभ पहुँच रहा है और विशेष रूप से यही दो वस्तुएँ टर्की से बाहर भेजी जाती हैं।

टर्की के पूर्वी भाग तथा सीमान्तत्र की दशा बिलकुल ही भिन्न है। वहाँ कुर्द और सीमान्तत्र के तुर्क अब भी गृह-हीन हैं और अधिकतर पशु पालकर अपना जीवन-निर्वाह करते हैं। दयारबेकर के पीछे और झील "वान" के उस पार के क्षेत्र में अब भी लोग गर्मियों में पहाड़ों पर चले जाते हैं और जाड़ों में फिर घाटियों में लौट आते हैं। इस उलटफेर में वहाँ के गाँव एक ऋतु में आबाद होते हैं और दूसरी ऋतु में उजड़ जाते हैं। इस क्षेत्र में सरकार ने पक्के गृह बनवाकर और खेती को उन्नति देकर इस बात का प्रयत्न किया है कि यहाँ का उलटफेर अलपाइन-प्रदेश का सा हो जाय, जहाँ से लोग अपने समस्त पशुओं के साथ चले तो जाते हैं, परन्तु गाँव में घर जैसे के तैसे बने रहते हैं। ये सब प्रयत्न इस कारण और भी किये गये थे जिससे

प्रतिवर्ष विद्रोह की जो अग्नि प्रज्वलित होती है, वह शान्त पड़ जाय।

टर्की के बहुत से गाँव अब भी वैसे हैं जैसे कि वे अतातुर्क की शक्ति में आने से पहले थे। देश के भीतर गाँवों के घर कच्चे, छप्परों के से और नीचे होते हैं जो एक चौरस और खुली जगह के चारों ओर बनाये जाते हैं। वर्षाऋतु में इस खुली जगह में कीचड़ ही कीचड़ होता है और गर्मियों में हवा के हरएक झोंके के साथ रेत या बालू उड़ती है। बहुधा गाँव के पशु इस खुले स्थान में घूमते-फिरते हैं। लगभग प्रत्येक गाँव में एक कुआँ अवश्य होता है, परन्तु उसके आसपास स्वच्छता का विशेष ध्यान नहीं रखा जाता। दूर-दूर के किसी-किसी गाँव में तो पेड़ों का कोई चिह्न भी नहीं मिलता। ऊँचे प्रदेशा के घास के मैदानों में बहुधा पशु चरते दिखाई देते हैं और जहाँ भूमि कुछ चौड़ी और चौरस है वहाँ जौ, मक्का और गेहूँ की खेती होती है। तटीय क्षेत्रों में झोपड़ों के स्थान पर लकड़ी के छोटे-छोटे मकान भी बनाये जाते हैं जिनके बीच के रास्ते पक्के होते हैं और उनके किनारे नालियाँ भी बनी रहती हैं। तटों के पीछे का क्षेत्र इटली के मैदानों की तरह बहुत हरा-भरा है जहाँ छोटे-छोटे खेत, ज़ैतून के बाग़ और अंगूर की बेलें बहुतायत से देखने को मिलती हैं। यहाँ हर गाँव में बाज़ार, पेड़ और बाग़ होते हैं। बाज़ार में स्त्रियाँ बादामी रंग के कपड़े पहने और काली शाल ओढ़े

सागभाजी, फल, अखरोट इत्यादि बेचती रहती हैं और पुरुष पेड़ों के नीचे बैठे क़हवा और हुक्का पीते रहते हैं।

केवल इस कारण कि तुर्कों के जीवन की दूसरी बातों की अपेक्षा, जिन्होंने देखते-देखते उन्नति की है, देहात में बहुत कम परिवर्तन हुए हैं। ऐसा कदापि न सोचना चाहिए कि वहाँ कोई उन्नति नहीं हुई है या सरकार अपनी ८० प्रति-शत प्रजा की ओर से बिलकुल उदासीन रही, बल्कि इसका यह कारण है कि देहातों में प्राचीन रीति-रिवाज बड़ी कठिनता से मिटते हैं। इसके अतिरिक्त भूतकाल ने तुर्क किसानों को इतना मूर्ख और अन्धविश्वासी बना रखा था कि यह कदापि सम्भव न था कि कोई व्यक्ति अपने ही जीवन में इन सब दोषों को दूर कर देता। फिर भी यह आशा की जाती है कि जिन लड़कों ने पहलेपहल लिखना-पढ़ना सीख लिया है और उनमें से विशेषतया वे लड़के—जिन्होंने कृषि कालेज में शिक्षा पाई है और जिनको इस बात का भली भाँति ज्ञान हो गया है कि विज्ञान में इतनी योग्यता है कि वह खेती में चार चाँद लगा दे—अपने पूर्वजों की अपेक्षा अवश्य कृषि की शीघ्र उन्नति की ओर अग्रसर कर सकेंगे। अब गाँव का स्कूल घरेलू और कृषि-जीवन में प्रत्येक वर्ष महान क्रान्तिकारी परिवर्तन करता जा रहा है और ऐसे गाँवों की संख्या भी घटती जा रही है जहाँ कोई स्कूल न हो।

सार्वजनिक शिक्षा के अतिरिक्त सरकार ने प्रत्यक्ष रूप से भी कृषि की उन्नति में बहुत सहायता दी है। जैसे—किसानों को यह बतला दिया जाता है कि वे किस प्रकार अपनी भूमि से अधिक से अधिक लाभ उठायें अथवा अकेले या दूसरों के साथ मिलकर किस प्रकार उन्नति के मार्ग पर अग्रसर हों। किसानों को निर्धनता, ऋण, बटवारा और शत्रुता से बचाने के लिए सहयोग-समितियाँ बनाने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है। सरकार सम्पत्ति और भूमि की अनुकूलता या प्रतिकूलता के विषय में अपनी कोई अनुमति प्रकट नहीं करती और न लोगों को समाजवादी बनाने ही का प्रयत्न करती है। इसका मुख्य उद्देश्य केवल इतना है कि तुर्क देश-भक्त और उन्नति-प्रेमी बन जायँ और जिस अवसर पर उन्नति करने का जो उचित ढंग हो, उसी पर कार्य करें। तुर्क किसानों में सहयोग और एकता की भावनाओं का उत्पन्न हो जाना ही इस बात का प्रत्यक्ष प्रमाण है कि वे अपने पड़ोसियों से सहयोग करके बहुत जल्द उन्नति कर लेंगे।

किसानों को अच्छी जुताई, बोआई और पशुओं की उत्तम जाति के बारे में व्यावहारिक और सैद्धान्तिक शिक्षा देनी चाहिए; क्योंकि जो लोग साधारण लिखना-पढ़ना जानते हैं, वे नक़शों, चार्टों और आँकड़ों से अधिक लाभ नहीं उठा सकते। इसी विचार से सरकार ने टर्की में अनेक प्रयोग-

शालाएँ खोल दी हैं जो कृषि की उन्नति के लिए सराहनीय कार्य कर रही हैं। इन प्रयोगशालाओं में प्रदर्शन करनेवालों को ट्रेनिंग दी जाती है तथा उन्नत बीज और अच्छे नस्ल के हृष्टपुष्ट पशु पाले जाते हैं। प्रदर्शन करनेवाले देहातों में इन्हीं बीजों और पशुओं को दिखाते, नुमायशी खेतों में आज़माये हुए बीजों को उगाते और सरकारी पशुओं की सहायता से किसानों को पशुओं की उत्तम जाति तैयार करने में सहायता करते हैं। किसान जब स्वयं अपनी आँखों से अच्छी पैदावार, शुद्ध दुग्ध आदि देख लेते हैं तो उन्हीं सिद्धान्तों पर स्वयं भी कार्य करना आरम्भ कर देते हैं।

अकारा के कृषि-कालेज से इतने अधिक प्रदर्शन करनेवाले ट्रेनिंग पाकर नहीं निकल सकते कि वे देश की आवश्यकताओं के लिए पर्याप्त हों, इसलिए सरकार नौकरी की अवधि पूर्ण हो जाने के बाद कुछ बहुत ही विश्वसनीय सैनिक उच्च-पदाधिकारियों को देहातों में स्वास्थ्यरक्षा और कृषि की उन्नति की शिक्षा देने के लिए नियुक्त करती है। इन उच्चपदाधिकारियों को तीन मास तक पशुओं, मुर्गियों और बकरियों की देखभाल, घरेलू बगीचों की देख-रेख, फलों के बीज बोना, उनकी काँट-छाँट व क़लमबन्दी तथा कुएँ और दीवार बनाने का काम सीखना पड़ता है। ट्रेनिंग पाने के पश्चात् ये सैनिक उच्चपदाधिकारी अपने-अपने गाँव चले जाते हैं और वहाँ व्यावहारिक नमूने दिखाकर लोगों को शिक्षा देते

हैं। गाँववाले इनसे यथेष्ट परिचित होते हैं, इसलिए इन उच्चपदाधिकारियों का आदर्श उन पर मन्त्र के समान काम करता है। बहुत से गाँवों में तो वे आवश्यकता पड़ने पर अध्यापकों का हाथ बटाने और मुखिया के कर्तव्यों को भी पूरा करते हैं।

देहातों के सहयोग के कार्यक्रम में ऋण देनेवाली सहयोग-समितियों को विशेष महत्त्व प्राप्त है और हर प्रकार से उन्हें प्रोत्साहित किया जाता है। इस समय टर्की में इस प्रकार की ६-७ सौ संस्थाएँ कार्य कर रही हैं और समय-समय पर कृषि-बैंक—जो टर्की का सबसे बड़ा बैंक है—उनकी सहायता करता रहता है। सन् १६४० में टर्की के समस्त देहातों क्षेत्रों को चार क्षेत्रों में बाँट दिया गया था जिनमें से प्रत्येक में पाँच-पाँच हज़ार गाँव थे। प्रत्येक क्षेत्र को हल चलाने, फ़सल काटने और माड़ने की पचास-पचास मशीनें सरकार की ओर से दी गई हैं। आशा की जाती है कि नये ढंग से भूमि जोतने और पतझड़ की ऋतु में फ़सल बोने से केवल कुछ ही वर्षों में पठार की उपज कई गुनी बढ़ जायगी। ऋणी और निर्धन किसानों का ऋण चुकाने के लिए सरकार प्रतिवर्ष कुछ पूँजी अलग रख देती है। किसानों को सरकारी यन्त्रों से भूमि जोतने के बदले में प्रति एकड़ के हिसाब से नाममात्र का शुल्क भी देना पड़ता है। प्रत्येक किसान अपनी भूमि का केवल

चतुर्थांश सरकारी यन्त्रों से जोतने पाता है। कदाचित् यह प्रतिबन्ध इसलिए लगाया गया है कि वे आलसी न बन और उनमें व्यक्तिगत भावना नष्ट न होने पाये।

सबसे अन्त में उन उन्नतियों का नम्बर आता है जिनसे सारी जाति लाभ उठा सकती है, जैसे नहरें या सड़कें इत्यादि। नहरों से किसानों को यह लाभ है कि वे आवश्यकता के समय सरलता से अपने खेतों की सिंचाई कर सकते हैं और सड़कें उनके लिए इस प्रकार लाभदायक हैं कि वे उनकी सहायता से अपनी पैदावार आसानी से मंडियों तक लाकर कभी-कभी तटीय क्षेत्रों के नागरिक जीवन से भी प्रभावित हो सकते हैं। टर्की को नहरों से बहुत लाभ पहुँच रहा है और भविष्य में और अधिक लाभ पहुँचने की आशा है; क्योंकि इन्हीं की सहायता से वहाँ की द्रुतगामिनी नदियाँ—जो वसन्तऋतु में उमड़ आती हैं और गर्मियों में सूख जाती हैं—उपयोगी बनाई जा सकती हैं। साइलेशिया में कुछ समय से "सिहान" नदी पर एक बड़ा बन्ध बाँधकर नहरें निकालने का प्रयत्न किया जा रहा है। सन् १६४० में १८ करोड़ पौंड का बजट केवल इसलिए तैयार किया गया था जिससे सिंचाई, पानी की निकास और नदियों को उपयोगी बनाने की योजनाओं को पूरा किया जाय। टर्की की वर्तमान सरकार दजला, फ़रात, क़ज़ल-

अरमाक़ और सकारिया नदियों से भी नहरें निकालना चाहती है।

देहाती क्षेत्रों के समान अभी टर्की की सड़कों की दशा अच्छी नहीं है। बलगारिया की सीमा से इस्तमबोल तक और तराबज़न से ईरान की सीमा तक जानेवाली सड़कें बहुत ही अच्छी हैं। जो सड़कें फ़ारफ़ोरस के समानान्तर और दर्रे दानियाल से अज़मीर तक बनाई गई हैं, उनकी दशा भी कुछ खराब नहीं है। परन्तु देश के भीतरी भागों की सड़कों की दशा बहुत खराब है। बरसात के दिनों में अंकारा से १० मील की दूरी पर सड़कों की दशा इतनी खराब हो जाती है कि जोते हुए खेतों और सड़कों में कोई अन्तर नहीं रहता और कुछ मनचले ड्राइवर सड़कों को छोड़कर कच्ची ज़मीन पर ही मोटर चलाना अच्छा समझते हैं। गर्मियों में सड़कों की दशा तो ठीक हो जाती है, परन्तु धूल से दम घुटने लगता है। पतझड़ और वसन्त की ऋतुओं में सड़कों पर बहुत कीचड़ रहती है और जाड़ों में बर्फ़ जम जाती है। सन् १६४० के भूचाल में अधिकांश मृत्यु होने का एक मुख्य कारण यह भी था कि लोग आसानी से इधर-उधर न जा सके; क्योंकि भूचाल के बाद बर्फ़ गिरना भी आरम्भ हो गया, जिससे पूरा देहाती क्षेत्र बर्फ़ से ढक गया। इसका परिणाम यह हुआ कि बचानेवाली टोलियाँ नष्ट होनेवाले क्षेत्रों में तीन-चार दिन बाद पहुँच सकीं, किन्तु उस समय ३० हज़ार प्राणी मर चुके थे।

१६३६ में सरकार ने वर्तमान सड़कों की मरम्मत करने और नई सड़कों के बनवाने के लिए एक दसवर्षीय योजना बनाई थी जिसके चालू करने के लिए १२ करोड़ पौंड की पूँजी स्वीकृत की गई थी।

टर्की की रेलों की दशा सड़कों की अपेक्षा कहीं अच्छी है। इसका एक कारण यह भी है कि कुछ रेलवे लाइनें उस्मानिया शासन-काल में भी बन चुकी थीं, यद्यपि बर्लिन-बग़दाद रेलवे अपूर्ण ही थी। पहले देश की सारी रेलवे लाइनें विदेशियों के अधिकार में थीं, इसलिए पहले तो प्रजातन्त्र टर्की ने पुरानी लाइनों को विदेशियों के अधिकार से निकालकर अपने हाथों में लिया, फिर स्वयं नई लाइनें बनानी आरम्भ कर दीं। इसमें कोई सन्देह नहीं कि इस सिलसिले में टर्की की औद्योगिक संस्थाओं ने आश्चर्यजनक कार्य किया। सन् १६२८ में ५ करोड़ ५० लाख पौंड व्यय करके तीन बड़ी-बड़ी कम्पनियाँ खोली गईं। अब केवल स्याम के सीमाप्रान्त की रेलवे लाइनें विदेशियों के अधिकार में हैं, नहीं तो सारे देश में तुर्क स्वयं बड़ी शीघ्रता के साथ अपनी रेलवे लाइनें बनवा रहे हैं। उस्मानी शासनकाल में पश्चिमी और दक्षिणी क्षेत्रों में तो रेलवे लाइनें बनाई गई थीं, परन्तु उत्तरी और पूर्वी भागों की ओर विशेष ध्यान नहीं दिया गया था। इसलिए वर्तमान सरकार इन्हीं भागों में अधिक से अधिक रेलवे लाइनें बनवाने और पूर्वी प्रान्तों

को बाह्य संसार से मिलाने के लिए प्रयत्नशील है। उन सबसे बड़ी रेलवे लाइनों में—जो अब तक पूर्ण हो चुकी है—एक तो वह है जो अंकारा से लोहे के सबसे बड़े केन्द्र करावक़ से होती हुई काले सागर के बन्दरगाहों तथा ज़ानगलडाक़ और अरगनी तक जाती है। दूसरी वह है जो अंकारा से काले सागर के बन्दरगाह स्वास और सैमसन होती हुई रुई के केन्द्र केसरी तक चली गई है। तीसरी वह है जो पूर्व में स्वास से रूस और रूस की सीमा पर स्थित लिननकिन नगर से होती हुई अरज़म तक गई है। चौथी वह है जो अरगनी से कुर्दिस्तान के मध्य के शहर दयारबेकर तक जाती है। सन् १९४० की योजना में भी इस प्रकार की रेलवे लाइनें बनाने की योजना थी, जैसे—उत्तर में एक रेलवे लाइन काले सागर के समानान्तर इस प्रकार बनाई जाय कि इस्तमबोल सीधे-सीधे अंकारा—ज़ानगलडाक़ और अंकारा—सिमसन रेलवे लाइनों से मिल जाय। पूर्व में रेलवे लाइनों को ईराक़ की सीमा तक मिलाया जा रहा है।

यद्यपि टर्की के देहातों और वहाँ की सड़कों को अभी तक अत्यधिक उन्नति नहीं दी जा सकी है, तथापि यह मानना पड़ेगा कि पिछले २० वर्ष के समय में उनकी दशा बहुत कुछ सुधर गई है। इस थोड़ी अवधि को देखते हुए इन वस्तुओं की वर्तमान उन्नति पर मन्द गति का दोष नहीं लगाया जा सकता। सन् १९३९ की पैदावार की अपेक्षा

अब कपास की पैदावार तिगुनी और शकर व तम्बाकू की पैदावार दुगुनी हो गई है। देश के ५० प्रतिशत से लेकर ६० प्रतिशत तक क्षेत्र पर खेती होने लगी है और बड़े पैमाने पर खेती करने का तरीक़ा यथेष्ट लोकप्रिय हो चला है।

---

# अध्याय १०

## औद्योगिक कारबार

टर्की में पंचवर्षीय योजना पर कार्य आरम्भ होने के दो वर्ष पश्चात् और प्रजातन्त्र की नींव पड़ने के ११ वर्ष के बाद अर्थात् सन् १९३४ में सरकार ने रेलों और कारखानों इत्यादि को अपने अधिकार में ले लेने की घोषणा की। इस दिन को विशेष महत्त्व प्राप्त है। सरकार की नीति के बारे में इतना अवश्य कहना पड़ेगा कि १० वर्ष पश्चात् टर्की को ज्ञात हो गया कि आर्थिक प्रबन्ध के लिए इससे अच्छी और कोई बात नहीं हो सकती। यह सत्य है कि टर्की में सामाजिक सुधार इस सिद्धान्त पर नहीं किये गये और आर्थिक प्रबन्ध को चलाने की योजना के सिलसिले में कोई ऐसा मूल सिद्धान्त नहीं था कि इससे सारे दूसरे सिद्धान्त भी बनाये जाते, बल्कि जिस प्रकार कृषि में संगठन का रंग

पैदा करने का प्रयत्न किया जा रहा था उसी प्रकार देश की आवश्यकताओं का विचार करके इस नीति पर भी कार्य करना आवश्यक था ; क्योंकि एक ओर तो टर्की की दशा इसी नीति को अपनाने के लिए उसे बाध्य कर रही थी और दूसरी ओर सरकार जल्दी से जल्दी टर्की को एक स्वतन्त्र, शक्तिशाली और उन्नतिशील देश बनाने के लिए विकल थी।

सन् १६२२ में टर्की में आर्थिक दशा की उन्नति हुई। उस समय १७ हज़ार मज़दूर विभिन्न कारखानों में काम कर रहे थे। रेलवे लाइनें बनाई जा चुकी थीं। ज़ानगलडाक की कोयले की खानों में बड़े ज़ोरशोर से कोयला निकाला जाने लगा था। कपड़े और क़ालीन के कारखानों में बड़ी शीघ्रता से काम हो रहा था। बड़े-बड़े शहरों में नल व बिजली का इस्तेमाल शुरू हो गया था और ट्राम गाड़ियाँ चलने लगी थीं। परन्तु ये सब धन्धे विदेशियों के हाथ में थे। सन् १६१४ में कुल विशेषाधिकारों का तो अन्त कर दिया गया था, परन्तु उनकी स्मृतियाँ अब भी इस रूप में विद्यमान थीं कि देश के उपर्युक्त मुख्य-मुख्य कारबारों में विदेशियों का हाथ था।

ऐसी दशा में टर्की को स्वतन्त्र और तुर्कों को देश-भक्त बनाने के लिए कमाल पाशा को इसके अतिरिक्त और कोई उपाय न सूझा कि सरकार स्वयं अपने कारखाने चलाये और जनता की भलाई की सम्पूर्ण संस्थाओं को अपनी

देखरेख में कर ले। परन्तु इस काम में कठिनता यह थी कि पूँजीपति सब विदेशी ही थे और व्यापार भी अधिक यूनानियों, अरमीनियनों और यहूदियों के हाथ में था। तुर्कों की कोई अपनी पूँजी न थी, इसलिए वे अपने यहाँ आर्थिक संगठन नहीं कर सकते थे।

क्रान्ति के पश्चात् सरकार ने १० वर्ष तक देश की आर्थिक दशा सुधारी, क्योंकि एक ओर तो उसे अपने पुराने ऋण का ४० प्रतिशत भाग देना पड़ा जो उस्मानिया-साम्राज्य से उत्तराधिकार में मिला था ( सन् १९३३ में यह ऋण ९ करोड़ ३० लाख पौंड तक पहुँच चुका था ) और दूसरी ओर उसे विदेशी पूँजीपतियों पर बिलकुल भरोसा न था। इसलिए आर्थिक स्वतन्त्रता प्राप्त करने के पश्चात् वह देश को उन्नत बनाने के कार्य को आरम्भ करना चाहती थी। सम्भव है, आरम्भ में सरकार को यह भी आशा रही हो कि औद्योगिक उन्नति के लिए देश के पूँजीपति आगे आ जायँगे। अतएव इसी आधार पर उसने फ़ैक्टरियाँ खोलने के लिए ज़मीन मुफ़्त देनी आरम्भ कर दी थी और रियायती टैक्स तथा आयातों पर कर भी लगा दिया था। इस समय सरकार ने केवल दो फ़ैक्टरियों का कार्य अपने हाथ में लिया। इन फ़ैक्टरियों को औद्योगिक बैंक और खानों के बैंक से आर्थिक सहायता दी जाती थी और उन्हीं के कर्मचारी उनकी देखभाल भी करते थे। ये संस्थाएँ—

जो राज्य की ओर से पूँजीपति और मैनेजर के दोहरे कार्य को पूरा करती थीं—आगे चलकर सरकार के कंट्रोल के लिए नमूने ( माडल ) का काम देने लगीं। सन् १९३३ में उनका स्थान "समर बैंक" ने ले लिया।

इस अवधि में पूँजीपतियों ने निजी कारखाने खोलकर एक सीमा तक औद्योगिक कारबार की उन्नति की। सन् १९२३ में टर्की के विभिन्न औद्योगिक कारखानों में ६२ हज़ार आदमी काम करते थे और कपड़े के कारखाने अधिकतर निजी ही होते जा रहे थे। कपड़े के कारखानों के मुख्य केन्द्र अडाना में—जहाँ कई सरकारी और निजी कारखाने थे—प्रतिवर्ष ५० लाख गज़ कपड़ा तैयार किया जाता था।

अतातुर्क और उसके सम्मतिदाताओं की दृष्टि में औद्योगिक उन्नति की यह गति सन्तोषजनक न थी। सम्भव है, पुराने औद्योगिक देशों के निवासी नये औद्योगिक देशों के निवासियों की इस भावना के महत्त्व को न समझ सकें जो वे औद्योगिक उन्नति के सिलसिले में स्वतन्त्रता और देशभक्ति को प्रदान करते हैं। इसका मुख्य कारण यह है कि भूतकाल में विदेशियों ने उनके उद्योगधन्धों से उचित और अनुचित हर प्रकार से लाभ उठाया। इसलिए वे अपनी स्वतन्त्रता और अपने अधिकारों की सारी आशाएँ युद्धसम्बन्धी और

औद्योगिक कारखानों विशेष रूप से बड़े-बड़े कारखानों की स्वतन्त्रता के साथ आशा लगाने पर बाध्य हो गये। सन् १९३३ में सरकार ने यह निर्णय किया कि अब औद्योनिक कारखानों में प्रायोगिक रूप से हस्तक्षेप करने का समय आ गया है। राष्ट्रीय पूँजी—जिस पर टैक्सों का बहुत बोझ था—देश में बड़े-बड़े औद्योगिक कारखाने खोलने की शक्ति न रखती थी। परन्तु यह भी प्रश्न था कि सरकार पूँजी लाये भी तो कहाँ से लाये।

सन् १९३३ में सारे संसार के आर्थिक संकट-काल ने टर्की का पुराना ऋण ९ करोड़ २० लाख पौंड से घटाकर केवल ७ लाख पौंड कर दिया। इसके अतिरिक्त पूर्वी भूमध्यसागर में टर्की एक फाटक की सी स्थिति रखने के कारण विशेष सैनिक महत्त्व रखता था। इसलिए उसके पुराने महाजन—फ्रांस और ब्रिटेन—उसके साथ रियायत करना उचित और बुद्धिमानी समझते थे। ऐसी दशा में उन विदेशी ऋणों पर—जो टर्की के सिर का बोझ बने हुए थे—फिर से विचार किया जा सकता था। सन् १९३० में "आइवनक्रेगर" से एक करोड़ डालर निजी तौर पर उधार लिये गये। परन्तु सन् १९३३ में पंचवर्षीय योजना को चालू करने के लिए और पूँजी की आवश्यकता पड़ी। इस बार टर्की ने रूस से एक करोड़ पौंड का ऋण लिया। उसके पश्चात् कई वर्ष तक तुर्कों ने अपने समस्त साधनों द्वारा

भरसक लाभ उठाने और अपने व्यापार के ⅘ भाग के लाभ से ऋण को लौटाया। इस सिलसिले में एक कठिनाई यह भी थी कि मध्य-योरप टर्की के व्यापार में अधिक से अधिक भाग लेने की आशा बाँध रहा था, परन्तु आर्थिक दृष्टि से टर्की ब्रिटेन और फ्रांस का आभारी था। इन देशों में टर्की से निर्यात की संख्या इतनी कम थी कि इससे पुराने ऋण की घटी हुई क़िस्तें भी अदा न हो सकती थीं। फिर भी ब्रिटेन टर्की को और अधिक ऋण देने पर और टर्की उसे लेने को तैयार था। सन् १९३८ में ब्रिटेन ने टर्की को इस शर्त पर ६० लाख पौंड का ऋण दिया कि वह सैनिक अस्त्र ब्रिटेन से मोल ले और टर्की को एक करोड़ पौंड तक व्यापारिक सामान भी उधार मोल लेने की आज्ञा दे दी। तात्पर्य यह कि इस प्रकार टर्की की पूँजी दिन-प्रतिदिन बढ़ती ही गई। फिर इसी समय अन्तरराष्ट्रीय परिस्थिति कुछ ऐसी हो गई कि धनी राष्ट्र ऋण देने में एक दूसरे को परास्त करने का प्रयत्न करने लगते। इसलिए टर्की को जर्मनी से १५ करोड़ मार्क का और रूस से ८० लाख डालर का ऋण मिला। ऋण की इस पूँजी से औद्योगिक उन्नति के लिए मशीनें मोल ली गईं। सन् १९३९ में और अधिक ऋण के मिलने का अवसर आया, क्योंकि इस वर्ष ब्रिटेन और फ्रांस ने मिलकर टर्की के साथ "सहयोग की सन्धि" की। इसके अनुसार इन दोनों देशों ने मिलकर टर्की

को २ करोड़ ५० लाख पौंड का ऋण और १ करोड़ ५० लाख पौंड का सोना दिया तथा ३५ लाख पौंड का अतिरिक्त ऋण भी देने का वचन दिया।

टर्की में औद्योगिक उन्नति में जो पूँजी व्यय की गई है, वह उपर्युक्त ऋण की कुछ पूँजी से कहीं अधिक है। इस कमी को तुर्कों ने अपने रहन-सहन के मापदण्ड को घटाकर और इस प्रकार रुपया बचाकर पूरा किया। जैसे सन् १९३३ में जो पंचवर्षीय योजना बनाई गई थी, उसके लिए ४ करोड़ पौंड की आवश्यकता थी और रूस से जो पूँजी मिली थी वह उस बड़ी पूँजी का केवल एक भाग थी। इसलिए शेष पूँजी में से २ करोड़ पौंड टैक्स लगाकर राष्ट्र से वसूल किये गये और उसके पश्चात् भी जो कमी शेष रह गई उसे समर बैंक ने पूरा किया, क्योंकि यह बैंक पंच-वर्षीय योजना ही को चलाने के लिए खोला गया था। आगे चलकर यह ज्ञात हुआ कि पंचवर्षीय योजना पर ४ करोड़ के स्थान पर ८ करोड़ व्यय होंगे, इसलिए उसी के हिसाब से टैक्सों में भी बढ़ती की गई।

पंचवर्षीय योजना का मुख्य अभिप्राय यह था कि देश की आवश्यकताओं की समस्त वस्तुएँ टर्की ही में बनाई जायँ जिससे उन्हें विदेशों से मँगाने की आवश्यकता न रहे। समस्त पूर्वी देश, जैसे ईरान, जापान, भारतवर्ष और चीन कपड़े के कारबार को और दूसरे कारबारों से महत्त्व देते

चले आये हैं, इसलिए टर्की ने भी सबसे पहले इसी कारबार पर ज़ोर दिया। सरकार की योजना के अधीन सन् १९३१ की अपेक्षा सन् १९३३ में मशीनी करघों की संख्या ७२ हज़ार से बढ़कर १ लाख ८९ हज़ार हो गई। केसरी का कारख़ाना—जिसमें इस समय प्रतिदिन ३३ हज़ार मशीनी करघे चलते रहते हैं—निकट पूर्व का सबसे बड़ा कपड़े का कारख़ाना समझा जाता है।

पंचवर्षीय योजना का दूसरा उद्देश्य बड़े-बड़े स्थानीय कारख़ानों की नींव डालना था, क्योंकि यह बात यथार्थ में स्वतन्त्रता का अगुआ समझी जा रही थी। आजकल ज़ानगलडाक़ की कोयले की खानों के समीप टर्की के बड़े-बड़े औद्योगिक केंद्र स्थित हैं। कोयले की खानों में फ़्रांसीसियों ने जो शेयर मोल लिये थे, वे टर्की ने उनसे मोआवज़ा देकर वापस ले लिये हैं। इन औद्योगिक कारख़ानों के अतिरिक्त कोआपरेटिव कारख़ाने भी खोले गये हैं, जैसे गन्धक के कारख़ाने। कराबक़ के स्थान पर टर्की का सबसे बड़ा लोहे का कारख़ाना है जिस पर इसको गर्व है। इस कारख़ाने को टर्की की आर्थिक उन्नति और स्वतन्त्रता का अग्रणी समझा जाता है। एक ब्रिटिश एजेंसी ने इस बड़े कारख़ाने के बनाने का ठेका लिया था। सितम्बर सन् १९३९ में इस कारख़ाने ने पहलेपहल अपना कार्य आरम्भ किया है। परन्तु बाद में पता चला कि इसकी स्थिति अच्छी नहीं है, क्योंकि रूय रिक की

बड़ी-बड़ी कच्चे लोहे की खानों से इसकी दूरी लगभग ४००मील है। इसके अतिरिक्त इन दोनों स्थानों के बीच अच्छी रेलों और सड़कों की भी कमी है, साथ ही कपड़े के कारखानों के केन्द्र केसरी, कच्चे लोहे की खानों के प्रसिद्ध नगर सवास, उपज की खपत के मुख्य-मुख्य नगर इस्तमबोल, अज़मीर और बासफ़ोरस तथा खनिज पदार्थों और क्रोम के मुख्य नगर अरगनी और मिट्टी के तेल के सोतों के केन्द्र सीरत से भी यह यथेष्ट दूरी पर स्थित है।

अटी बैंक—जो सन् १९३६ में स्थापित किया गया था—टर्की की खानों की मुख्य संस्था को चलाता है। इस बैंक ने देश में खनिज पदार्थों की काफ़ी छानबीन की है। ड्यूगिक के कच्चे लोहे की खानों का पता और गलीमान में कच्चे क्रोम की प्रगति के बारे में सबसे पहले इसी बैंक ने पता लगाया था। टर्की में क्रोम को मुख्य माना जाता है और संसार में सबसे अधिक क्रोम यहीं पाया जाता है। अटी बैंक ने सन् १९३७ से तीन वर्ष की योजना के अधीन कार्य आरम्भ किया। इस योजना का मुख्य उद्देश्य टर्की के खनिज पदार्थों के उत्पादन को बढ़ाना था।

युद्ध के कारण औद्योगिक उन्नति की उत्तम योजनाओं को न चलाया जा सका। इसका यह परिणाम हुआ कि सरकार को अपनी कष्ट से एकत्रित पूँजी को औद्योगिक उन्नति के साथ रक्षा के कार्यों पर व्यय करना पड़ा। फिर भी वर्तमान

महायुद्ध के प्रारम्भिक समय से टर्की में दो नये सिद्धान्तों पर औद्योगिक उन्नति हो रही है। अप्रैल सन् १९४० में सीरत के स्थान पर मिट्टी के तेल के सोतों का पता लगाया गया और अब भी खोज की जा रही है। टर्की के लिए यह बात बड़ी कष्टदायक थी कि उसके आसपास के देश अर्थात् पश्चिम में रूमानिया, उत्तर-पूर्व में बाकू और दक्षिण-पूर्व में ईरान और ईराक़ तो तेल के सोतों से भरे पड़े हों, परन्तु टर्की में कोई भी तेल का सोता न हो। इसके अतिरिक्त यह बात भी दुःखदायी थी कि कोहक़ाफ़ के तेल के सोतोंवाले क्षेत्रों के निवासी तुर्की-भाषा बोलते हैं। ईराक़ के सबसे बड़े तेल के केन्द्र मूसल की सम्पत्ति के बारे में तुर्कों और ईराक़ के संरक्षक अर्थात् अँगरेज़ों में बहुत दिनों तक विरोध रहा। इस झगड़े का निर्णय हो जाने के पश्चात् सन् १९२७ से तुर्कों को मूसल के सोतों से १० प्रतिशत तेल मालिकाना हक़ के रूप में मिलने लगा है। यदि सीरत के आसपास के प्रान्त में यथेष्ट तेल के सोते निकल आये तो यह सब झगड़ा बन्द हो जायगा।

उन्नति के सिलसिले में दूसरी मुख्य बात बिजली की शक्ति है। इसको प्राप्त करने का भी सारा उत्तरदायित्व इसी बैंक पर आकर पड़ता है जिसने "मैट्रोपोलिटन विकर्स इलेक्ट्रिकल कम्पनी लिमिटेड" को कई औद्योगिक क्षेत्रों में—जैसे ज़ानगलडाक़ और एजियन सागर के तटीय क्षेत्रों में

"अदला" के स्थान पर—बड़े-बड़े बिजलीघर बनाने का ठेका दे दिया है।

पिछले दस वर्ष में जो कार्य किये गये हैं, वे अभी अधूरे तो हैं परन्तु हैं महत्त्वपूर्ण। टर्की को औद्योगिक उन्नति के लिए अब भी बहुत कुछ करना है, क्योंकि अभी तक वहाँ न तो कोई पूरे तौर पर संगठित औद्योगिक संस्था ही स्थापित हुई है और न मिस्त्रियों और कारीगरों ही ने अपनी कला में पूर्ण दक्षता प्राप्त की है। जन-संख्या का केवल १० वाँ भाग कारखानों में काम करता है और अधिकतर किसान या तो अपनी आय बढ़ाने के लिए वर्ष दो वर्ष कारखानों में काम कर लेते हैं या जब उन्हें खेतों से अवकाश मिलता है तब वर्ष में कुछ महीने कारखानों में काम कर लेते हैं। इन सब बातों से स्पष्ट है कि अभी टर्की में औद्योगिक संस्था के स्थापित होने का प्रश्न ही उत्पन्न नहीं हुआ है और न पूँजीपतियों ही का ऐसा वर्ग पैदा हुआ है जो लाभ को बढ़ाने के लिए चिन्ताशील हो। जहाँ तक मज़दूरों का सम्बन्ध है; अभी वे इतना संगठित नहीं हैं कि अपने अधिकारों और मज़दूरी बढ़ाने का प्रयत्न करें। सम्भव है, कारखानों और जनता की भलाई की संस्थाओं के सरकार के अधीन रहने से ये दोनों वस्तुएँ कभी स्थापित ही न हों। इस समय देखने में तो ऐसा ही ज्ञात होता है कि सरकारी नौकर, इंसपेक्टर, इंजीनियर इत्यादि ही टर्की

के आर्थिक संगठन के संचालक हैं। परन्तु इस प्रकार वे समस्याएँ सामने नहीं आने पातीं जो पूँजीवाद का एक अंश हैं। मज़दूरों को एक ओर तो इस बात की मनाही है कि वे यूनियन बनाकर सम्मिलित रूप से अपनी माँगे पूरी न करायें और दूसरी ओर किसानों की तुलना में मज़दूरों का रहन-सहन कुछ बढ़ा-चढ़ा है और उन्हें रहने की जगह, सफ़ाई और मनोरंजन की इतनी अधिक सुविधाएँ प्राप्त हैं कि आरम्भ में वे कारख़ाने के जीवन को अच्छा समझते हैं।

---

# अध्याय ११

## सैनिक संगठन

टर्की की सैनिक शक्ति यथेष्ट है। यहाँ के सैनिक बहुत ही उत्साही और वीर होते हैं। वे अब भी अपने पूर्वजों के उस नाम को बनाये हुए हैं, जो उन्होंने इस्लाम के लिए अपना जीवन देकर पैदा किया था।

वर्तमान महायुद्ध के आरम्भ काल से अब तक टर्की में ५ लाख सेना हर समय सुसज्जित रखी गई है। इस छोटे से देश के लिए सेना की यह संख्या बहुत बड़ी है। सारी सेना में २३ डिवीज़न हैं जिनमें एक आर्मर्ड डिवीज़न, तीन

सवारों के डिवीज़न और ७ क़िलेबन्द डिवीज़न हैं। अनुमान किया जाता है कि आवश्यकता पड़ने पर सैनिकों की संख्या २० लाख तक बढ़ाई जा सकती है।

शान्ति-काल में टर्की में २० हज़ार सैनिक अफ़सर और १ लाख ७४ हज़ार सैनिक थे। अब रिज़र्व और उन सैनिकों को भी स्थायी रूप से सेना में भर्ती कर लिया गया है जो पहले सैनिक कार्यों से बरी थे। टर्की में २० वर्ष के नवयुवक सेना में भर्ती किये जाते हैं, जिन्हें तीन वर्ष तक सेना में कार्य करना पड़ता है। उसके पश्चात् २६ वर्ष के भीतर उन्हें किसी समय भी सेना में बुलाया जा सकता है। प्रतिवर्ष १ लाख ७५ हज़ार सैनिकों को सैनिक शिक्षा दी जाती है जिनमें से आधे सैनिकों को सेनाओं में काम भी करना पड़ता है। तुर्क सेना के लिए अस्त्र अधिकतर विदेशों से मँगाये जाते हैं। यथार्थ में टर्की की सबसे निर्बल समस्या उसके अस्त्र-शस्त्र हैं। यों तो केसरी के कारख़ाने में वायुयान भी बनते हैं तथा कराबक़ में लोहे और सीरत में मिट्टी के तेल के मिलने की भी बहुत सम्भावना है, परन्तु वहाँ छोटे-छोटे अस्त्र-शस्त्र बनानेवाली केवल दो या तीन ही फ़ैक्टरियाँ हैं।

टर्की के समुद्री बेड़े में ४० से कुछ अधिक जलयान हैं। ये जलयान छोटे-छोटे हैं। समुद्री बेड़े में ८०० अफ़सर और ४००० व्यक्ति कार्य करते हैं। मुख्य-मुख्य युद्धपोतों के नाम नीचे दिये हुए हैं—

जंगी क्रूज़र "वाविस" लगभग २३ हज़ार टन का है। यह जर्मन जलयान "गोयबन" को परिवर्तित करके बनाया गया है। यह जलयान सन् १६११ में बना था। इसमें ११ इंची तोपें लगी हुई हैं। इसके अतिरिक्त जंगी क्रूज़र "हमीदिया" ३८३० टन का और क्रूज़र "मिकेडिया" ३३०० टन का है। ये दोनों क्रूज़र सन् १६०३ ई० में पहलेपहल समुद्र में उतारे गये थे। इन जंगी क्रूज़रों के अतिरिक्त टर्की के समुद्री बेड़े में तोपें लगी हुई दो नावें, बारूदी सुरंगें हटानेवाले तीन यान, ८ विध्वंसक यान और १२ पनडुब्बियाँ हैं। असमत की खाड़ी में समुद्री बेड़े के सबसे बड़े अड्डे "गोलक" को बहुत उन्नति दी जा रही है।

हाल ही में टर्की के वैमानिक अड्डे ( हवाई बेड़े ) को जो उन्नति दी गई है वह अभी तक गुप्त रक्खी गई है। सन् १६४० में अग्र पंक्ति में लड़नेवाले ३७० वायुयान थे और वैमानिक अड्डे के समस्त कर्मचारीमंडल में ८५०० व्यक्ति थे। उस समय तुर्कों में तीन वैमानिक ब्रिगेड थे, जिनमें से प्रत्येक में दो वैमानिक रेजीमेंट और दो वैमानिक दस्ते सम्मिलित थे। वायुयान अधिकतर ब्रिटेन, जर्मनी और अमेरिका के बने हुए हैं। तुर्क सैनिकों के समान तुर्क पाइलट ( वायुयान चलानेवाला ) भी बहुत ही निडर और चतुर होते हैं।

———

# अध्याय १२

## टर्की का विदेशी व्यापार

जब तक कि टर्की के विदेशी व्यापार का वर्णन न कर दिया जाय, उसके अन्तरराष्ट्रीय सम्बन्धों पर विवाद करना निरर्थक होगा। जर्मनी ने व्यापारिक सम्बन्ध को राजनीति का एक अस्त्र बना रखा था, इसलिए आजकल विदेशी व्यापार अन्तरराष्ट्रीय सम्बन्धों के साथ सम्बद्ध हो गया है। टर्की जर्मनी के दक्षिण-पूर्व में बग़दाद के रास्ते पर स्थित है। नाज़ीवाद ने बल्कान के समान टर्की में भी आर्थिक हस्तक्षेप करने के लिए अपने पुराने हथकंडों से काम लेना आरम्भ कर दिया था। परन्तु टर्की ने जर्मनी के प्रभाव को कम करने के लिए ब्रिटेन और फ़्रांस से भी व्यापारिक और आर्थिक सम्बन्ध स्थापित कर लिये। यह दूसरी बात है कि बहुधा इन देशों से टर्की का व्यापार घटता और बढ़ता रहा। अतएव इससे यह अनुमान लगा लेना अधिक उचित न होगा कि इसी के साथ इन देशों से टर्की के राजनीतिक सम्बन्ध भी घटते और बढ़ते रहे। यथार्थ में राजनीतिक संघर्ष का ठीक अनुमान मंडियों और ऋणों की आर्थिक परिस्थिति को ही सामने रखकर लगाया जा सकता है।

इसमें कोई सन्देह नहीं कि टर्की एक कृषि-प्रधान देश है। वहाँ का औद्योगिक उत्पादन अब भी ऐसा नहीं कि उसे विदेशों को भेजा जाय, बल्कि जब से औद्योगिक उन्नति आरम्भ हुई है, क़ालीनों का निर्यात भी कम हो गया है। तुर्क किसान और खान खोदनेवाले अभी अधिकतर कच्चा माल, जैसे क्रोम, कोयला, कपास, तम्बाकू, गेहूँ, ज़ैतून, फल आदि ही पैदा करते हैं। जिस समय संसार के व्यापार को स्थिरता प्राप्त थी, उस समय टर्की भी कच्चा माल पैदा करनेवाले दूसरे देशों के समान अपने आयात और निर्यात में संतुलन रखने में सफल था। इसका मुख्य कारण यह था कि उसे अपने कच्चे माल की क़ीमत इतनी अच्छी मिलती थी कि उसी से वह अपने कारख़ानों के लिए मशीनें और जनता की साधारण आवश्यकताओं की वस्तुएँ बाहर से मँगाता था। सन् १९२९ में टर्की का विदेशी व्यापार बहुत बढ़ा हुआ था और वह बहुत से देशों से व्यापार करता था। यदि इस सम्बन्ध में कोई कठिनाई थी तो वह केवल यह थी कि ब्रिटेन और फ्रांस से उसका व्यापार इतना कम था कि उससे उस्मानिया शासन-काल के ऋण की क़िस्तें भी न दी जा सकती थीं। सन् १९२८ के बाद से फ्रांस वह सब कच्चा माल जो वह अभी तक टर्की से मोल लेता था, अब अपने जीते हुए देशों ही से मोल लेने लगा। ब्रिटेन ने भी रुई मिस्र और संयुक्त राष्ट्र अमेरिका से, तम्बाकू वर्जीनिया से और अन्य कच्चा माल

अपने साम्राज्य के विभिन्न देशों से मोल लेना आरम्भ कर दिया।

सन् १६२६ के अत्यधिक उत्पादन ने दूसरे देशों के समान टर्की को भी बहुत बड़ी हानि पहुँचाई जिससे विदेशी व्यापार को बड़ा धक्का लगा। अतएव अपने आर्थिक संगठन में संतुलन बनाये रखने के लिए तुर्क अपने माल को साफ़ करने पर कटिबद्ध हो गये और सन् १६३३ में टर्की और अमेरिका में बड़ी शीघ्रता से सामान का बदलना आरम्भ हो गया। टर्की और पाश्चात्य देशों के सम्बन्ध में पुरानी कठिनाइयाँ अब भी थीं। पुराना ऋण अभी तक केवल इस कारण नहीं दिया जा सका था कि फ़्रांस और ब्रिटेन टर्की को जितना माल भेजते थे, उतना उससे माल न ले सकते थे।

जर्मनी भला कब चूकनेवाला था। वह तुरन्त अवसर से लाभ उठाने के लिए मैदान में आ गया। इस सचाई को नहीं छिपाया जा सकता कि सन् १६३५ में डा० स्चाट की जादूभरी शक्ति ने ऋणी टर्की को अपने विदेशी व्यापार को सम्हालने के योग्य बना दिया। जर्मनी ने बल्कान के समान टर्की में भी अन्धाधुन्ध क्रय प्रारम्भ कर दिया। अतएव तम्बाकू, क्रोम, फल, रुई और मैदा, ये पदार्थ—जो टर्की में उत्पन्न होते थे—धड़ाधड़ मोल लिये जाने लगे और उनके स्थान पर मशीनें और दवाएँ आने लगीं। ऐसी दशा में जर्मनी पर टर्की का ऋण बढ़ने लगा, इसलिए सन् १६३३

और १९३७ के बीच टर्की का ५० प्रतिशत से अधिक निर्यात जर्मनी के लिए सुरक्षित कर दिया गया।

फिर भी टर्की बल्कान के समान असावधान न था। वह व्यापार का यह रंग देखकर डरने लगा। उसने सन् १९३८ और १९३९ में ब्रिटेन और फ़्रांस से व्यापारिक सम्बन्ध बढ़ा लिये। इसका यह परिणाम हुआ कि जर्मनी की अपेक्षा अब इन देशों को टर्की का सामान अधिक जाने लगा। परन्तु इन देशों से व्यापार करने में टर्की की पुरानी कठिनाइयाँ कुछ भी कम न हुईं। सन् १९३२ की ओटावा की सन्धि के अनुसार फ़्रांस ब्रिटेन से भी अधिक अपने उपनिवेशों से ही सामान मोल लेने में ब्रिटेन से आगे बढ़ चुका था। इसलिए ब्रिटेन ने इस कठिनाई को दूर करने के अभिप्राय से टर्की को १ करोड़ ६० लाख पौंड का ऋण दिया। परन्तु जर्मनी ने १५ करोड़ मार्क का ऋण देकर टर्की पर एक और बोझ रख दिया। इस समय इटली, यूनान और मिस्र की आर्थिक नीति एक समान थी, अर्थात् इन सब देशों में मेवे, फल, कपास, तम्बाकू इत्यादि की खेती होती थी, अतएव बहुधा इन देशों में सहयोग के स्थान पर प्रतियोगिता आरम्भ हो जाती थी। रूस जिस प्रकार और दूसरे देशों के साथ एक छोटे पैमाने पर व्यापार कर रहा था, उसी प्रकार टर्की से भी उसके व्यापारिक सम्बन्ध अधिक गहरे न थे। केवल जर्मनी ही एक

ऐसा औद्योगिक देश था जो टर्की के साथ एक बड़े पैमाने पर व्यापार करने के लिए उद्यत था। फिर भी सन् १६३६ में जब युद्ध की सम्भावना बढ़ गई और जर्मनी ने अपनी आक्रमणकारी कार्यवाहियाँ बढ़ा दीं, तब तुर्क जर्मनों से खिंचने लगे। सन् १६३६ की ग्रीष्मऋतु में आर्थिक झगड़ों के अतिरिक्त अंकारा-पैक्ट के सिलसिले में ब्रिटेन और फ्रांस और टर्की में लगातार बातचीत होती रही। युद्ध के छिड़ जाने पर तुर्कों ने जर्मनी के साथ व्यापारिक सम्बन्ध नहीं दुहराये। इसका यह परिणाम हुआ कि कई महीने तक व्यापार बिलकुल बन्द रहा। अंकारा-पैक्ट पर हस्ताक्षर हो जाने के पश्चात् मित्रराष्ट्रों ने अक्तूबर में टर्की को २ करोड़ ५० लाख पौंड का ऋण देने का वचन दिया। इसलिए अब इस ऋण को व्यापारिक सम्बन्ध बढ़ाने के काम में लाया गया और यह निश्चय हुआ कि टर्की के तम्बाकू और दूसरी निर्यात होनेवाली वस्तुओं पर ब्याज और बची हुई पूँजी दी जाय। इस पैक्ट ने पाश्चात्य प्रजातन्त्रों से टर्की के सम्बन्ध अत्यधिक बढ़ा दिये। अब न केवल टर्की से जर्मनी को सामान जाना बन्द हो गया, वरन् उसका अधिक सामान पाश्चात्य देशों को जाने लगा और ब्रिटेन के कारखाने टर्की के औद्योगिक प्रसार की आगामी उन्नति में भी भाग लेने लगे। ब्रिटेन की कम्पनियों ने नये पावर-स्टेशनों के बनाने में सहायता दी और कराबक़ के लोहे के कारख़ाने को, जिसे बनते हुए लगभग एक महीना

हुआ था, पूरा करा दिया। ब्रिटेन के जहाज़ बनानेवालों ने न केवल तुर्कों को व्यापारिक जहाज़ बनाने में, वरन् बन्दरगाहों को बनाने के अनुमानित आँकड़े तैयार करने में भी पर्याप्त सहायता दी। इसके अतिरिक्त सर अलेक्ज़ेंडर गब और उनके साथियों ने दो वर्ष तक टर्की की सरकार को आर्थिक मामलों में उत्तम अनुमतियाँ भी दीं। परन्तु इन सब बातों के होते हुए भी, टर्की प्रजातन्त्रों से और प्रजातन्त्र टर्की से सच्चे हृदय से व्यापारिक सम्बन्ध बढ़ाना चाहते थे, फिर भी पुरानी कठिनाइयाँ दूर न हो सकीं। इस सम्बन्ध में नवम्बर सन् १९३९ में टर्की का एक व्यापारिक मंडल लन्दन गया और इसी मास में टर्की को कच्चे पदार्थ के क्रय का प्रबन्ध करने के लिए फ्रांस में एक नया संगठन स्थापित किया। ब्रिटेन और फ्रांस की देखादेखी विस्तृत रूप में समस्त ब्रिटिश साम्राज्य के लिए व्यापारिक कारपोरेशन बना दिया, परन्तु फिर भी ये देश टर्की का कच्चा पदार्थ इच्छा के अनुसार क्रय करने से वंचित ही रहे। जर्मनी से २-३ वर्ष तक ज़ोरशोर के साथ व्यापार होने का यह कारण था कि टर्की के कच्चे पदार्थ के मूल्य में ३० प्रतिशत की वृद्धि हो गई थी जिससे इस समस्या में एक और नई कठिनाई पैदा हो गई। इन सब बातों का यह परिणाम हुआ कि टर्की पर पाश्चात्य देशों का ऋण बढ़ गया और व्यापारिक सन्धि के अनुसार इसके चुकाने का भी कोई उपाय न निकल सका।

मतलब यह कि सन् १६४० के आरम्भ में टर्की पर ब्रिटेन का २० लाख पौंड का ऋण था।

इस अवधि में जर्मनी ने पुनः व्यापारिक सम्बन्ध स्थापित करने के लिए चुपके-चुपके जवाबी कार्रवाई शुरू कर दी और वह भी ऐसी कि एक ओर तो उसने विज्ञापनों का छपवाना बन्द कर दिया—जिससे प्रेस शासन पर दबाव डाले—और दूसरी ओर उसने टर्की के उन कारखानों का पक्ष लेना आरम्भ कर दिया जो उसकी आवश्यकताएँ पूरी करने में बहुत कुछ सहायक थे, जिससे अन्य कारखाने भी शासन को जर्मनी से दोबारा व्यापारिक सम्बन्ध स्थापित करने पर बाध्य करें। परन्तु इन सब बातों से अधिक टर्की की आर्थिक निर्बलताओं ने स्वयं उसे जर्मनी के हाथों में खिलौना बनने पर बाध्य कर दिया कारण, इस समय एक तो टर्की ने अपने सबसे बड़े ख़रीदार के हाथ अपना माल बेचना बन्द कर दिया था। दूसरे, उसके स्थान पर टर्की को कोई दूसरा ख़रीदार भी ऐसा न मिला जो उसकी इस बड़ी हानि को पूरा कर सकता। तीसरे, सन् १६४० के भूचाल और बाढ़ ने उसकी दशा और भी शोचनीय बना रखी थी। इस अभागे वर्ष में ३०००० तुर्कों की मृत्यु हो चुकी थी। एक लाख मनुष्य बेकार हो चुके थे और १ करोड़ ५ लाख पशु मर गये थे। फिर शासन की आय घटने के कारण करों में भी २५ प्रतिशत से लेकर १०० प्रतिशत तक की वृद्धि करनी पड़ी।

स्पष्ट है कि ऐसी दशा में जर्मनी को दबाव डालने का स्वर्ण अवसर मिल गया। आरम्भ में तो टर्की ने इस बात का प्रयत्न किया कि मुख्य-मुख्य वस्तुओं का व्यापार विशेष रूप से हो, क्योंकि जर्मन नई व्यापारिक सन्धि के लिए उतावले हो रहे थे, इसलिए बातचीत शुरू हो गई। तुर्कों ने इस सिलसिले में कोई विशेष उत्साह नहीं प्रकट किया जिससे बहुत सम्भव था कि बातचीत का सिलसिला बढ़ता, परन्तु इसी बीच में पश्चिमी मोर्चा खत्म हो गया।

इस घटना से जो महत्त्वपूर्ण राजनीतिक परिणाम निकलते थे, वे तो निकले ही; परन्तु साथ ही साथ आर्थिक संगठन पर भी उनका बहुत प्रभाव पड़ा। इटली के युद्ध में कूदने से कुछ दिन पहले ही भूमध्यसागर में व्यापारिक जलयानों का आना-जाना बिलकुल बन्द हो गया। केवल यूनान के व्यापारिक जलयान पूर्वी भूमध्यसागर और ब्रिटेन के बीच उस समय तक आते-जाते रहे, जब तक कि स्वयं यूनान से युद्ध न छिड़ गया। ऐसी दशा में टर्की ने दो मार्ग अपनाये। एक रेल द्वारा बसरा तक और दूसरा डैन्यूब नदी और काले सागरवाला मार्ग। दुर्भाग्य से बसरा के मार्ग से अधिक सामान के जाने की इसलिए आशा न थी कि इस ओर के देश औद्योगिक न थे। लाचार होकर सन् १९४० के बाद से टर्की को अपने समस्त विदेशी व्यापार जर्मनी के जीते हुए देशों तक ही सीमित रखना पड़ा। इसी वर्ष जुलाई के महीने में

टर्की और जर्मनी के बीच व्यापारिक समझौता भी हो गया। इस अवसर पर जर्मनी ने बड़ी उदारता से तुर्कों को व्यापारिक सुविधाएँ देने का आश्वासन दिया और दूसरी बातों के साथ-साथ यह भी निश्चित हुआ कि टर्की से बाहर जानेवाला सारा सामान जर्मनी स्वयं अपने देश तक ले जायगा और जर्मनी से जो सामान टर्की आनेवाला होगा उसे भी जर्मनी टर्की तक पहुँचा देगा। इस प्रकार टर्की की यातायात की कठिनाई भी दूर हो गई।

सन् १९४० की वसन्तऋतु के पश्चात् शनैः शनैः जर्मनी ने पहले की तरह फिर टर्की के विदेशी व्यापार पर अधिकार कर लिया। टर्की की जिन वस्तुओं को जर्मनी स्वयं नहीं मोल ले सकता था, उन्हें उसके विजित देश—जैसे हंगरी और रूमानिया—अच्छे दामों पर मोल लेने लगे। ब्रिटिश साम्राज्य का व्यापारिक कारपोरेशन भी टर्की से पहले की तरह तम्बाकू, क्रोम, फल इत्यादि मोल लेता रहता था। परन्तु यातायात की कठिनाइयाँ अब पहले से भी अधिक बढ़ चुकी थीं। इसके अतिरिक्त ब्रिटेन को जर्मनी के कड़े आर्थिक दबाव और उसके उन व्यापारिक मंडलों का भी सामना करना पड़ता था, जो टर्की में हर स्थान में मौजूद थे। फिर भी ब्रिटेन के साथ टर्की का बर्ताव विश्वसनीय ही रहा अर्थात् जब तक वह ब्रिटेन की क्रोम और ऊन की माँग पूरी न कर देते थे, तब तक वे दूसरे के हाथ इन वस्तुओं को नहीं बेचते

थे। इतना होते हुए भी टर्की का सामान सन् १९४१ तक ब्रिटेन की अपेक्षा जर्मनी अधिक जाता रहा। फिर यूनान और उसके द्वीपों को जीत लेने से सोलिना से लेकर टर्की की सीमा तक कालेसागर के सब बन्दरगाहों पर जर्मनी का अधिकार हो गया जिससे बासफ़ोरस के जलडमरूमध्य से जितना भी व्यापार होता था, वह सब जर्मनी के प्रभाव में आ गया। ऐसी दशा में जर्मनी के एक अवरोधी आर्डर से टर्की का सारा व्यापार चौपट हो सकता था। अतएव इसी बात को सामने रखते हुए जुलाई सन् १९४१ में जर्मनी ने व्यापार के बारे में टर्की से नई सन्धि की बातचीत शुरू की।

---

# अध्याय १३

## टर्की की विदेशी नीति

टर्की की विदेशी नीति सदैव उसके आर्थिक जीवन और विदेशी व्यापार के विचार से बदलती रही। प्रजातन्त्र टर्की की पहली यात्रा तो वह थी जब वह संगठन और राष्ट्रीय स्वतन्त्रता प्राप्त करने में संलग्न था। इसके बाद ही दूसरी यात्रा वह थी जब उसे धुरीराष्ट्रों के बढ़ते हुए भय को दूर रखने के लिए रक्षात्मक उपाय काम में लाने पड़े और वह भी इस तरह कि उसने अपने पूर्व और पश्चिम के कमज़ोर

पड़ोसियों तथा ब्रिटेन और फ्रांस के समान बड़ी पश्चिमी शक्तियों को अपनी ओर मिलाना शुरू कर दिया। इसके बाद तुर्कों को एक ऐसी यात्रा करनी पड़ी जहाँ कुछ ऐसा मालूम होता था कि युद्ध का उतार-चढ़ाव उन्हें आक्रमणशील तुर्कों के मुक़ाबिले में अकेला छोड़ देगा। इसमें बिलकुल ही सन्देह नहीं कि स्वतन्त्रता की लड़ाई और लासोनी की सन्धि ने तुर्कों को यथार्थ रूप में स्वाधीनता प्रदान की। सन् १९२३ में टर्की में एक बहुत संगठित राष्ट्रीय सरकार स्थापित हो गई और बल्कान की नई रियासतों के साथ इसकी सीमाओं के बारे में कोई विशेष झगड़ा बाक़ी न रहा। हाँ, सन्धि की चार शर्तें ऐसी थीं जिनसे तुर्कों को अधिक सन्तोष नहीं हुआ। इनमें एक शर्त तो यह थी कि बास-फ़ोरस जलडमरूमध्य के दुर्गों में सेनाएँ न रखी जायँ और जलडमरूमध्य से आने-जानेवाले जलयानों की देखरेख का अधिकार एक अन्तरराष्ट्रीय समिति को दे दिया जाय। दूसरे यह कि टर्की और ईराक़ के सीमा-सम्बन्धी झगड़ा को ऐसे ही समाप्त कर दिया जाय और मूसल-प्रान्त के बारे में कोई विरोध न प्रकट होने पावे। तीसरी शर्त से सिकन्दरिया का शहर संजक़—जिसको तुर्क अपनी सम्पत्ति समझते थे—स्याम के साथ मिलाकर फ्रांसीसियों की देखरेख में दे दिया गया था। इस प्रकार चौथी शर्त के अनुसार डूडूकानीज़ के द्वीप तुर्कों को न मिलकर

इटली को मिले और तुर्कों ने इसको अपने प्रति अन्याय समझा।

सन् १६२६ में मूसल के बारे में अन्तरराष्ट्रीय समिति (लीग आफ़ नेशंस) ने भी तुर्कों के विरुद्ध निर्णय किया, जिससे ब्रिटेन और ईराक़ से कुछ द्वेष-भाव पैदा हो गया। भविष्य में धुरीराष्ट्रों के प्रचारकों ने इस तनातनी को टर्की और ईराक़ के कान उमेठना बताया और इस सिलसिले में इस बात के ढोल पीटे गये कि टर्की कभी मूसल के तेल के सोतों से अपना अधिकार छोड़ने को तैयार न था। जर्मनी इतना ही कहकर नहीं रुक गया, बल्कि समय-समय पर उसने अंकारा को यह आशा दिलाई कि यदि जर्मनी विजयी हुआ तो मूसल के सोते उसे लौटा दिये जायँगे, और बग़दाद की राजसत्ता पर यह प्रकट किया कि जर्मनी की विजयी सेनाएँ मूसल पर तुर्कों का अधिकार न होने देंगी, बल्कि उसकी रक्षा करने में वे हर प्रकार से ईराक़ की सहायता करेंगी। सन् १६३६ में बासफ़ोरस जलडमरूमध्य के निर्णय पर दृष्टि डाली गई। इसका मुख्य कारण यह था कि योरप के क्षितिज पर द्रुतगति से युद्ध के मेघ मँडला रहे थे और समग्र शक्तियाँ टर्की को भावी युद्ध में अपनी ओर सम्मिलित करने के अभिप्राय से उसकी अप्रसन्नता को दूर कर देना चाहती थीं। इसके बाद एक एक करके जर्मनी ने गत सन्धियों को तोड़ना आरम्भ कर दिया और कुछ ही

दिनों बाद राइन नदी के प्रान्त पर अधिकार कर लिया। परन्तु इस अवसर पर टर्की ने जर्मनी के पीछे चलना उचित न समझा, बल्कि अपनी पुरानी चाल चलता रहा, अर्थात् उन प्रदेशों पर आक्रमण करने की अपेक्षा—जहाँ उसे सेना रखने और दुर्ग बनवाने की रोक थी—उसने यही उचित समझा कि एक अन्तरराष्ट्रीय कान्फ्रेंस द्वारा बासफ़ोरस के जलडमरूमध्य के बारे में वह अपनी सब माँगों को पूरा करवा ले। टर्की की शान्ति-प्रिय नीति को दूसरे राष्ट्रों ने भी सराहा और उन्होंने इस मामले में टर्की की सहायता भी की। इस प्रकार न केवल टर्की ने बासफ़ोरस जलडमरूमध्य से जल-यानों के आने-जाने की शर्तें बदलवा लीं, वरन् अपने देश में दुर्ग-निर्माण आदि करने की भी फिर से आज्ञा प्राप्त कर ली। बासफ़ोरस का जलडमरूमध्य वैसे एक नदी-सा प्रतीत होता है, परन्तु यथार्थ में वह समुद्र का ही एक भाग है। पुरानी चलन के अनुसार तो यह उचित है कि दूसरे समुद्रों के समान समुद्र के इस भाग में भी सारे संसार के जलयान विना किसी रुकावट के आ-जा सकें, क्योंकि इस जलडमरूमध्य की स्थिति एक विशेषता रखती है, इसलिए यही उचित समझा गया कि टर्की की भलाई का ध्यान रखते हुए इस जलडमरूमध्य को दूसरे समुद्रों के समान न समझा जाय। उपर्युक्त अन्तरराष्ट्रीय कान्फ्रेंस में यह निश्चित हुआ कि शान्तिकाल में सब देशों के जल-यान इस

जलडमरूमध्य से आ-जा सकते हैं, परन्तु युद्ध-काल में केवल उन्हीं देशों के यौद्धिक या व्यापारिक जल-यान इससे आ-जा सकेंगे जो कालेसागर से मिले-जुले हुए हैं। किन्तु यौद्धिक जल-यानों के बारे में एक शर्त यह भी थी कि राष्ट्रसंघ के आदेशों के अनुसार वे उसी दशा में उससे विना रोक-टोक आ-जा सकते हैं जब कि वे आक्रमणकारी शक्ति के विरुद्ध सताये हुए देश की सहायता करने के लिए जाना चाहें और यदि स्वयं टर्की से युद्ध छिड़ जाय तो फिर उसे इस बात का पूर्ण अधिकार है कि वह जिस देश के यानों को चाहे उससे आने-जाने दे या रोक दे। सिकन्दरिया के झगड़े का फ़ैसला गत महायुद्ध के छिड़ने से कुछ ही पहले हुआ था। इस सिलसिले में फ़्रांसीसी विचित्र दुविधा में थे। यदि वे संजक़ पर अधिकार बनाये रखने पर हठ करते तो यह टर्की के असन्तोष का कारण होता। यदि उससे हाथ खींचते तो स्याम की धरोहर हाथ से जाती। तुर्कों का कहना है कि इस प्रदेश में उनकी जन-संख्या अधिक है, इसलिए टर्की को पूर्ण अधिकार है कि वह उसे अपने देश का एक भाग बना ले। अन्त में फ़्रांसीसियों ने पहले इस प्रदेश को विशेष सुविधाएँ दीं। फिर राष्ट्रीय स्वाधीनता दे दी और सन् १९३९ में उसे पूर्ण रूप से टर्की को दे दिया। इस समय मित्र-राष्ट्र किसी भी मूल्य पर तुर्कों को अपने साथ रखना चाहते थे; क्योंकि इसके विना पूर्वी भूमध्यसागर में उन्हें अपना

अपना अधिकार जमाये रखना कठिन था। इसमें कोई सन्देह नहीं कि संजक़ को तुर्कों को दे देने से स्याम-वासियों की शिकायतों की लम्बी सूचियों में एक शिकायत और बढ़ गई। परन्तु फ़्रांस और टर्की के सम्बन्ध बहुत ही अच्छे हो गये। संजक़ आगे चलकर, जिसका नाम "हाटे" पड़ा, प्रजा-तन्त्र टर्की का एक महत्त्वपूर्ण भाग बन गया और सन् १९३९ के चुनाव में इस प्रान्त के ५ डिपुटी राष्ट्रीय समिति के लिए चुने गये।

केवल डूडूकानीज़ के द्वीपों की समस्या ऐसा है जिसे अभी तक नहीं सुलझाया जा सका है। ये द्वीप एजियन समुद्र में टर्की के तट के समीप ही स्थित हैं जिनमें यूनानी अधिक संख्या में हैं। यदि इन द्वीपों पर इटली का अधिकार न होता तो बहुत सम्भव था कि उनके लिए यूनानियों और तुर्कों में युद्ध छिड़ जाता; क्योंकि तुर्क ऐतिहासिक और सैनिक दृष्टि से और यूनानी वंश के विचार से उनको अपनी सम्पत्ति बताते हैं। परन्तु वर्त्तमान परिस्थिति में ये दोनों स्वत्वाधिकारी इन टापुओं पर इटली के मनमाने अधिकार को मानते हैं। इसलिए "शत्रु के शुभ मित्र" के हिसाब से ये दोनों जातियाँ अब एक दूसरे के बहुत निकट आ गई हैं और दोनों में कदाचित् इस प्रकार का कोई समझौता भी हो गया था कि जब धुरीराष्ट्र पराजित हो जायँ, तब इन द्वीपों को आपस ही में बाँट लें।

पिछले कटु अनुभवों ने योरप की शक्तियों की ओर से टर्की के भीतर सन्देह पैदा कर दिये हैं। उसने निश्चय कर लिया है कि वह न केवल उनके झगड़ों ही से अलग रहेगा, वरन् उनकी गति-विधि को भी सन्देह की दृष्टि से देखेगा। यह एक अनोखी बात थी कि सन् १६२५ और १६२६ के बीच—जब कि तुर्क बड़ी शीघ्रता से पाश्चात्य सभ्यता और सिद्धान्तों को अपनाने में तल्लीन थे—फिर भी वे पश्चिमी शक्तियों को सन्देह की ही दृष्टि से देखते रहे और उनसे अलग ही रहना चाहते थे। परन्तु यदि पाश्चात्य सभ्यता और सिद्धान्तों को ध्यान से देखा जाय तो ज्ञात हो जाता है कि ये सिद्धान्त स्वयं देशों और राष्ट्रों को स्वरक्षा की शिक्षा देने के अतिरिक्त यह भी सिखाते हैं कि पश्चिम की कार्य-प्रणाली सीख जाने के बाद फिर उससे अलग रहने का ही प्रयत्न करना चाहिए। मूसल और सिकन्दरिया के बारे में टर्की ब्रिटेन और फ्रांस से अप्रसन्न था। परन्तु अल्पसंख्यकों की समस्या के कारण—जो अभी तक इच्छा के अनुसार नहीं सुलझाई जा सकी थी—बल्कान राज्यों तथा रूमानिया और बलगारिया से भी उसकी तनातनी पहले की तरह बनी हुई थी। इटली टर्की और फ्रांस के इस मनमुटाव से पूरा-पूरा लाभ उठाना चाहता था और इसी विचार से सन् १६२८ में उसने टर्की से मैत्री की सन्धि भी कर ली थी। परन्तु इसके होते हुए भी तुर्कों ने डूडूकानीज़ के द्वीपों

और पिछले युद्ध में इटली को राजसत्ता की अनातोलिया के एक बड़े भाग में अधिकार जमाने की नियति को नहीं भुलाया था। ऐसी दशा में मुसोलिनी का बार-बार यह कहना कि भूमध्यसागर के पूर्वी भाग की रक्षा करना इटली अपना कर्तव्य समझता है, तुर्कों को खटकता रहता था।

फिर भी रूस से अच्छे सम्बन्ध स्थापित हो जाने के कारण टर्की की यह पृथक्ता दूसरे रूप में पूरी हो गई। टर्की के समान रूस में भी एक क्रान्तिकारी शासन था जिसका पाश्चात्य देशों में से कोई भी मित्र तथा सहायक न था। इसलिए सोवियट शासन ने तुर्कों की स्वाधीनता की लड़ाई में कमाल-पाशा के शासन के प्रारम्भिक काल से ही समवेदना प्रकट करना आरम्भ कर दी थी। सन् १९२५ में जिस समय मूसल का झगड़ा चल रहा था उस समय टर्की ने रूस के साथ मैत्री और तटस्थता का दसवर्षीय पैक्ट किया और सन् १९३५ में इस पैक्ट को फिर दुहराया गया। इस समय रूस और टर्की के राज-नीतिक सम्बन्ध बहुत ही सन्तोषजनक रहे और अन्तरराष्ट्रीय झगड़ों का भी इन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा। फिर भी ये दोनों देश इस कारण एक दूसरे से बिलकुल न मिल सके कि कमालपाशा सारे संसार की क्रान्ति के स्थान पर केवल टर्की ही में क्रान्ति चाहते थे। टर्की ने कभी अपने यहाँ कम्यूनिस्ट संस्थाओं को पनपने न दिया और जब रूसी इंजीनियर कपड़े के कारखानों के बनाने में सहायता देने

के लिए आये, तब भी इन दोनों देशों में कोई विशेष सम्बन्ध उत्पन्न नहीं हुआ। यह बिलकुल सत्य है कि रूस ने इस अवधि में तुर्कों को भयभीत होने का कोई अवसर नहीं दिया। फिर भी प्रत्येक तुर्क—जिसके भीतर कुछ भी राजनीतिक जागृति थी—रूस के जार के लोभ एवं कुस्तुन्तुनिया और बासफ़ोरस के जलडमरूमध्य पर रूस की ललचाई हुई दृष्टि को कभी न भुला सका। कारण, वह भली भाँति जानता था कि प्रत्येक देश की विदेशी नीति् की रक्षा क्रान्ति से नहीं; बल्कि भौगोलिक और आर्थिक प्रभावों से स्थापित होती है।

सन् १९३० तक यथार्थ रूप तुर्क में अपने राष्ट्रीय संगठन का कार्य इच्छानुसार पूर्ण कर चुके थे। इसलिए पाश्चात्य देशों से पृथक् रहने की नीति को त्यागकर अब वे अन्तरराष्ट्रीय क्षेत्र में अपना भाग लेने के लिए प्रस्तुत हो गये। अतातुर्क के सुधारों ने तुर्कों में जागृति उत्पन्न करके उनके भीतर जातीय उत्साह कूट-कूटकर भर दिया था और टर्की की स्वतन्त्रता ने उसे निकट पूर्व में एक नेता का पद दे दिया था। इसलिए सन् १९३२ में टर्की अपनी स्वाधीनता मनवाने और अन्तरराष्ट्रीय एकता प्राप्त करने के अभिप्राय से राष्ट्रसंघ में सम्मिलित हो गया। इसके एक ही वर्ष पश्चात् जर्मनी में हिटलर का प्रभुत्व आरम्भ हुआ।

सन् १९३३ के बाद योरप के दूसरे देशों के समान टर्की

भी इस काशिश में रहने लगा कि किसी प्रकार उसका देश योरप के उन लुटेरों के चंगुल में न फँसने पाये जो सारे संसार को जीतने का स्वप्न देख रहे थे। हम विना किसी हिचकिचाहट के इतना तो कह ही सकते हैं कि हिटलर के पूर्व की ओर बढ़ने से बहुत पहले ही इटली ने आक्रमणकारी कार्यवाहियाँ आरम्भ कर दी थीं। पूर्वी भूमध्यसागर पर मुसोलिनी के लम्बे-चौड़े दावों और हब्शा पर आक्रमण करने से समस्त मध्यपूर्व में एक हलचल-सी मच गई थी। टर्की ने इस विचार से कि कहीं धुरीराष्ट्र उनके विरोध से अनुचित लाभ उठाने का प्रयत्न न करें और कम से कम समय में आवश्यकतानुसार एक दूसरे का सहायता और रक्षा के लिए तैयार हो जायँ—इन सब देशों को सहयोग करने के लिए आमन्त्रित किया, जिनके लिए भय उत्पन्न हो चुका था। सादाबाद का पैक्ट—जो सन् १९३७ में हुआ था। उपर्युक्त उद्देश्य को पूरा तो न करता था, परन्तु उसके अनुसार अफ़ग़ानिस्तान, ईरान, ईराक़ और टर्की में यह निश्चित हुआ था कि वे एक दूसरे की सीमा की ओर बढ़ने का प्रयत्न न करेंगे।

इसी प्रकार बल्कान राज्य भी पहले तो इटली के विरुद्ध और कुछ अवधि के बाद जर्मनी और इटली, दोनों के विरुद्ध आपस में सहयोग और मेल-जोल बढ़ाने की कोशिश करने लगे। यह रंग देखकर टर्की ने भी अपने बल्कान राज्यों से

मुख्यतया यूनान से—जिसकी दुर्बल सेनाओं को ११ वर्ष पहले उसने स्मर्ना से निकालकर समुद्र की ओर खदेड़ दिया था—मैत्री का सम्बन्ध स्थापित कर लिया और उनमें एक पैक्ट भी हो गया । इस समय टर्कों ने ऐसे कई शासनों से मैत्री भाव स्थापित कर लिये थे जो स्वयं एक दूसरे से खिंचे हुए चले आ रहे थे । इसलिए बल्कानी सहयोग के सिलसिले में भी टर्कों ही को नेता का पद प्राप्त हुआ । सन् १९२९ में बल्कान के विभिन्न राज्यों ने कान्फ्रेंस करनी आरम्भ कर दी थी, परन्तु इसी वर्ष बल्कान राज्यों की सहयोग की संस्था की एक योजना केवल इस कारण असफल रही कि बलगारिया ने सहयोगी राज्यों की वर्तमान सीमाओं को भौगोलिक सीमाएँ मानने से अस्वीकार कर दिया था । इसलिए इसी आधार पर भविष्य में भी बल्कान के सहयोग के सम्बन्ध में किये गये समस्त प्रयत्न असफल सिद्ध हुए, परन्तु तुर्क इस असफलता से निराश नहीं हुए । इसी अवधि में पूर्वी योरप के लोग आस्ट्रिया में नाज़ियों के कारनामे देखकर भड़कने लगे, यद्यपि इनके ये कारनामे इतने ऐयारी से पूर्ण न थे जितना कि वे, जिनसे उन्होंने बहुत से देशों में मतभेद फैलाकर बल्कान के लिए भी एक बहुत बड़ा भय पैदा कर दिया था । सन् १९३४ में तुर्कों ने गड़रिये के समान रूमानिया, युगोस्लाविया और यूनान को एक ही केन्द्र में करके बल्कान-

पैक्ट पर हस्ताक्षर कराये और बल्कान राज्यों के पैक्ट को कार्यान्वित करने के लिए चार परराष्ट्र-मन्त्रियों की एक समिति और एक आर्थिक समिति बनाई। इस प्रकार टर्की डैन्यूब नदी से लेकर भारतवर्ष तक के बहुत से छोटे-छोटे देशों के रक्षात्मक संगठन का केन्द्र बन गया। बलगारिया इस दल में सम्मिलित होने से आनाकानी ही करता रहा, इसलिए इस पृथकृता ने रक्षात्मक कार्यवाहियों की और भी अधिक आवश्यकता समझी।

सन् १९१४ के महायुद्ध की सन्धि की शर्तों को एक-एक करके तोड़ना, राइन नदी के प्रदेश पर जर्मनी का अकस्मात् अधिकार कर लेना और स्पेन का गृह-युद्ध—ये सब ऐसी घटनाएँ थीं जिन्होंने योरप के राष्ट्रों को या तो धुरी राष्ट्रों के साथ अथवा रूस और फ्रैंको के साथ मिलने के लिए बाध्य कर दिया। टर्की भी धुरीराष्ट्रों के दल में सम्मिलित होना चाहता था और बहुत सम्भव था कि शीघ्र ही सम्मिलित हो जाता। परन्तु ब्रिटेन ने योरप की इस दलबन्दी को बुरा समझकर, इसे तोड़ने का प्रयत्न किया और मि० चेम्बरलेन ने इटली को अपनी ओर मिलाने के लिए अथक प्रयत्न आरम्भ कर दिये। यही कारण था कि सन् १९२७ में ब्रिटेन ने टर्की से समझौते के प्रस्ताव को अधिक महत्त्व नहीं दिया। यद्यपि केवल उसी समय नहीं, वरन् इससे पहले भी तुर्कों ने इस बात के लिए तत्परता दिखाई थी कि

कि बल्कान के लिए एक उचित रक्षात्मक योजना बनानी असम्भव है।

इसके विरुद्ध म्यूनिख की घटना और उसके छः मास पश्चात् प्रेग पर नाज़ियों के अधिकार ने ब्रिटेन को उचित कार्यवाही करने पर बाध्य कर दिया। इसी लिए रूस से बात-चीत शुरू की गई तथा ब्रिटेन और फ्रांस ने मिलकर प्रजा-तन्त्र टर्की से सन्धि की शर्तों के बारे में बातचीत आरम्भ की। यथार्थ में सन् १६३६ की ग्रीष्म-ऋतु टर्की के लिए बहुत ही शुभ थी। जिनेवा की सम्मिलित रक्षा-योजना तो पहले ही असफल हो चुकी थी और बल्कान की योजना के सफल होने की प्रारम्भ ही से कोई आशा न थी। फिर भी इस समय ऐसा प्रतीत होता था कि पश्चिमी और पूर्वी शक्तियों के सहयोग से अब यह योजना प्रयोग में आ जायगी। तुर्क इससे बिलकुल परिचित न थे कि रूस चुपके-चुपके जर्मनी से भी सन्धि की वार्ता कर रहा है और फ्रांस मिल-कर विरोध करने के स्थान में म्यूनिख की नीति को व्यवहार में लाना चाहता है। उस समय तुर्कों का यह विचार असत्य न था कि यदि धुरीराष्ट्रों का विरोध न किया गया तो वे जिस प्रकार और दूसरे छोटे-छोटे देशों को आसानी से जीत चुके हैं, उसी प्रकार भूमध्यसागर और एशिया माइनर पर भी अधिकार जमाने में उन्हें कोई कठिनाई न होगी। परन्तु यदि बड़ी और छोटी शक्तियों ने

आपस में मिल-जुलकर उसका विरोध किया तो नाज़ी अपने बुरे इरादों में सफल न हो सकेंगे।

अगस्त सन् १६३६ में जब तुर्कों को रूस और जर्मनी के समझौते के हो जाने की सूचना मिली तब वे दंग रह गये और उन्होंने जो रक्षात्मक योजना बनाई थी वह केवल कल्पित सिद्ध हुई। परन्तु इटली ने तुरन्त ही युद्ध की घोषणा नहीं की और रूमसागर व बल्कान में एक समय तक शान्ति रहा, इसलिए तुर्कों को अपनी तटस्थता बनाये रखने का अवसर मिला। तात्पर्य यह कि इस अवधि में उन्होंने नई परिस्थिति के अनुसार अपने प्रबन्ध ठीक कर लिये और एम० सिराजओगुलू शीघ्र ही मास्को भेजे गये जिससे वे रूस की नई नीति का असली मतलब समझकर पश्चिमी शक्तियों के साथ टर्की के सहयोग की कोई सूरत निकालें। किसी प्रकार टर्की ने अप्रैल में फ्रांस के साथ और मई के महीने में ब्रिटेन के साथ एक दूसरे की सहायता के समझौते की घोषणा कर दी। परन्तु रूस के साथ, जो जर्मनी का मित्र बन चुका था, टर्की के मित्रता के सम्बन्ध जैसे के तैसे बने रहे। आरम्भ में रूस ने टर्की के साथ किसी प्रकार के विरोध का परिचय तो दिया, परन्तु वह सावधान अवश्य था। यद्यपि दोनों में एक दूसरे की सहायता और कालेसागर के पैक्ट के बारे में बातचीत चल रही थी, परन्तु रिबनट्राप के आ जाने से बातचीत का सिल-

सिला बन्द हो गया। एम० सिराजओगुलू उस समय मास्को में थे। इस अवधि में टर्की के प्रेस ने रूस की नीति का प्रत्यक्ष विरोध किया और एम० सिराजओगुलू के साथ उसका उदासीन भाव से मिलने पर टीका-टिप्पणी आरम्भ कर दी थी। कुछ समय की बातचीत के बाद वे मास्को से लौट आये और आते ही उन्होंने घोषणा कर दी कि टर्की शीघ्र फ्रांस और ब्रिटेन से एक पूर्ण समझौता करना चाहता है। रूस में एम० सिराजओगुलू से किस प्रकार की बातचीत आरम्भ हुई, इसका पता लगाना कठिन है। हाँ, इतना अनुमान अवश्य लगाया जा सकता है कि नाज़ियों के दबाव डालने पर रूस ने टर्की को धमकी देकर पाश्चात्य देशों से सम्बन्ध-विच्छेद करने पर बाध्य करना चाहा था। परन्तु टर्की के वैदेशिक मन्त्री के साहस और स्वाभिमान ने परिणाम की चिन्ता न करते हुए ब्रिटेन और फ़्रांस को धोखा देने से साफ़ इनकार कर दिया और कुछ ही सप्ताहों के बाद अर्थात् १६ अक्तूबर को ब्रिटेन, फ़्रांस और टर्की ने अंकारा के समझौते पर हस्ताक्षर कर दिये।

इस समझौते के अनुसार यह निश्चय हुआ था कि यदि टर्की पर योरप की कोई शक्ति आक्रमण करेगी तो ब्रिटेन और फ़्रांस टर्की की सहायता करेंगे। यदि भूमध्यसागर में युद्ध छिड़ गया तो दोनों पक्ष एक दूसरे का साथ देंगे और यदि यूनान और रूमानिया की रक्षा के ज़मानतदार

होने की हैसियत से ब्रिटेन और फ़्रांस को लड़ाई में कूदना पड़ा तो टर्की उनका हाथ बटायेगा। इन सब बातों के साथ ही साथ समझौते की एक ख़ास शर्त यह भी था कि टर्की को किसी ऐसी बात पर बाध्य न किया जायगा जिसके कारण उसे रूस से लड़ना पड़े।

युद्ध के आरम्भ के पहले कुछ महीनों में मित्रराष्ट्रों के साथ टर्की का रवैया बहुत ही विश्वसनीय और मैत्रीपूर्ण था, परन्तु वे रूसियों से बहुत रुष्ट थे। रूस और जर्मनी का पैक्ट टर्की के लिए हलाहल था। मास्को में एम्० सिराज-ओगुलू के साथ जो उदासीनता बर्ती गई, वह भुलाई नहीं जा सकती थी। इन सब बातों से अधिक जिस बात ने तुर्कों को रूसियों की ओर से बिलकुल ही निराश कर दिया था, वह रूसी राज्य में उन प्रान्तों का सम्मिलित करना था जो टर्की की रक्षा के लिए बहुत महत्त्व रखते थे। तुर्कों को इससे कोई सम्बन्ध न था कि रूस का साम्राज्य बढ़ाने का यह कार्य रक्षा के विचार से किया गया था या केवल साम्राज्यवादी सिद्धान्तों के अन्तर्गत, क्योंकि वे केवल इतना जानते थे कि ऐसी दशा में रूस रक्षा या इसी प्रकार का कोई और बहाना करके बासफ़ोरस के जलडमरूमध्य और कुस्तुन्तुनिया पर अधिकार कर सकता है। अतएव एक बार फिर तुर्कों को रूस की ओर से वही भय उत्पन्न हो गया जो पिछली दो शताब्दियों से पूर्वी प्रश्न की गोद में पलता

चला आ रहा था। इससे स्पष्ट ज्ञात होता है कि अंकारा-पैक्ट में तुर्कों ने जो शर्त रखी थी वह रूस की मित्रता के आधार पर नहीं, बल्कि उसके भय के कारण थी। तुर्क प्रत्येक दशा में दो मोर्चों की लड़ाई से बचना चाहते थे।

युद्ध के पहले वर्ष में रूस के भय के अतिरिक्त, जो दिन-प्रतिदिन नये-नये प्रदेशों पर अधिकार करता चला जा रहा था, तुर्कों के और कोई भय उत्पन्न नहीं हुआ। परन्तु जब तुर्कों ने यह सुना कि जर्मन इस प्रकार का मिथ्या प्रचार कर रहे हैं और उनके प्रमाण में अपने स्वभाव के अनुसार लिखित प्रमाण भी उपस्थित करना चाहते हैं कि रूस और फ़िनलैंड की लड़ाई के समय में तुर्क मित्रराष्ट्रों को रूस के विरुद्ध बातूम पर आक्रमण करने के लिए एशिया माइनर को अड्डा बनाने की आज्ञा देने के लिए तत्पर थे तो उनमें भयंकर आवेश उत्साह उत्पन्न हुआ और उन्होंने प्रत्यक्ष इस असत्य का खंडन करना आरम्भ कर दिया। इस अवसर के अतिरिक्त और किसी अवसर पर तुर्कों ने अपने आवेश को प्रदर्शित नहीं किया; बल्कि वे बड़ी शान्तिपूर्वक युद्ध की गति-विधि देखते रहे। टर्की का प्रेस जर्मनी का प्रत्यक्ष विरोध करने लगा। स्याम में फ्रांसीसी और मिस्र में ब्रिटिश सेनाओं के एकत्र हो जाने से तुर्कों को मित्रराष्ट्रों की अजेय शक्ति पर विश्वास हो चला था। फिर इस समय तुर्कों को इस बात की भी पूर्ण आशा थी कि इटली तटस्थ ही रहेगा।

इस प्रकार बल्कान और भूमध्यसागर युद्ध की अग्नि से बचे रहेंगे। टर्की का प्रेस बार-बार इटली को चेतावनी देता रहता था कि यदि उसने अपने व्यवहार में परिवर्तन किया तो बड़ी हानि उठावेगा। तुर्क अस्त्र-शस्त्र से भी सजे हुए थे, जिससे यदि इन चेतावनियों के देते हुए भी इटली युद्ध में कूदे तो उसका दृढ़ता पूर्वक विरोध किया जाय।

अभी टर्की शत्रु के दूर ही रहने और निश्चिन्त बैठे रहने के विचारों ही में डूबा हुआ था कि सूचना मिली कि फ़्रांस ने हथियार डाल दिये हैं। इस स्थान पर इस बात का अनुमान लगाना आवश्यक है कि जब टर्की ने यह सूचना सुनी और उसे मालूम हुआ कि अब ब्रिटेन अकेला रह गया है तब उसकी बेचैनी और घबराहट की कोई सीमा न रही; क्योंकि एक ही सप्ताह पहले फ़्रांस की ५ लाख सशस्त्र सेना स्याम में खड़ी थी। ब्रिटेन का समुद्री बेड़ा भूमध्यसागर और अन्य समुद्रों में बिना रोक-टोक घूम रहा था और फ़्रांस की सीमा पर मित्रराष्ट्रों की सेनाएं मैजिनो रक्षा-पंक्ति की रक्षा कर रही थीं। परन्तु दूसरे ही सप्ताह में फ़्रांस ने हथियार डाल दिये। स्याम की सेना निःशस्त्र होने के लिए तैयार हो गई और ऐसे संकट-काल में ब्रिटिश जहाज़ी बेड़े को सिकन्दरिया और माल्टा की रक्षा करना भी कठिन प्रतीत होने लगा। इस समय साधारणतया यह विचार किया जाने लगा था कि वज़ीर (फ़्रांस) के पिट जाने के बाद

ब्रिटेन अब युद्ध की शतरंज की इस हारा हुई बाज़ी को अधिक समय तक न चला सकेगा और थोड़े ही दिनों में जर्मनी से सन्धि करने के लिए बाध्य हो जायगा। यद्यपि इस समय इटली ने युद्ध की घोषणा कर दी थी और अंकारा-पैक्ट के अनुसार अँगरेज़ तुर्कों से भूमध्य सागर की लड़ाई में सम्मिलित होने की माँग कर सकते थे, तथापि इस अवसर पर तुर्कों के पास युद्ध से तटस्थ रहने का यह बहाना था; क्योंकि अब फ़्रांस और ब्रिटेन का मित्रराष्ट्र नहा रहा है, इसलिए वे युद्ध से अलग रह सकते हैं।

जून सन् १९४० के पश्चात् तुर्क विदेशी नीति के सम्बन्ध में बड़े धैर्य से काम लेते रहे। अक्तूबर सन् १९४० में जब इटली ने यूनान पर आक्रमण कर दिया तब तुर्क बिलकुल चुप रहे। बाद में जब अप्रैल सन् १९४१ में इटली का मान बनाये रखने के लिए जर्मनी ने बल्कान में अपनी सेनाएँ भेजीं तब भी टर्की ने ब्रिटेन, यूनान और युगोस्लाविया के साथ मिलकर धुरीराष्ट्रों से युद्ध करना उचित न समझा। इसके पश्चात् जूलाई के महीने में तुर्कों ने जर्मनी के मित्रतापूर्ण सन्धि-पत्र पर हस्ताक्षर कर दिये। अतएव टर्की का प्रेस भी, जो अभी तक धुरीराष्ट्रों का स्पष्ट रूप से विरोध करता था, अब बिलकुल शान्त तथा तटस्थ हो गया। भविष्य में युद्ध ने विकराल संकट-काल उपस्थित किये। पहले इटली की, फिर जर्मनी की और तत्पश्चात जापान की भयंकर परा-

जय हुई। परन्तु टर्की अन्त तक तटस्थ ही बना रहा। फिर भी ये घटनाएँ ऐसी नहीं हैं कि इतहासकार उन्हें सरलता से भूल जायँ; क्योंकि वे इतिहास का एक अंश बन चुकी हैं।

---

# अध्याय १४

## द्वितीय महायुद्ध के पश्चात् टर्की की दशा

टर्की ने गत २० वर्ष की अवधि में आश्चर्य जनक उन्नति की है। कमाल अतातुर्क के समय में इस छोटे से देश ने जिस शीघ्रता के साथ उन्नति की सीढ़ियाँ पार की हैं, उसका उदाहरण योरप के और किसी देश में नहीं मिल सकता। महायुद्ध के कारण पिछले आठ वर्षों में टर्की को विशेष उन्नति करने का तो अवसर न मिल सका, परन्तु उसके ह ते हुए भी उसने अपने उच्च मापदंड को किसी प्रकार गिरने नं दिया। इस अवधि में बहुत से युद्धग्रस्त तथा तटस्थ देशयुद्ध की अग्नि में झुलस गये, परन्तु टर्की युद्ध के आरम्भ से अन्त तक अपनी तटस्थता पर दृढ़ रहा। ऐसी दशा में उसे हर समय विपत्तियों का सामना करने के लिए उद्यत रहना पड़ता था। अस्त्र-शस्त्र से सुसज्जित एक बड़ी सेना हर समय शत्रु का विरोध करने के लिए उद्यत रहती थी टर्की को

सन् १६३६ से ही प्रथम श्रेणी की ट्रेनिंग पाई हुई और नवीन अस्त्रों से सुसज्जित एक बड़ी सेना रखनी पड़ी। इसके लिए उसने रुपया और अनाज का भी प्रबन्ध किया। इसी कठिन काल में तुर्कों ने यातायात के साधनों और युद्धोपयोगी औद्योगिक उत्पादनों की भी उन्नति की ओर पग उठाया, साथ ही साथ एक अच्छा वैमानिक अड्डा भी तैयार किया। इस कार्य से अवकाश पाने के बाद समुद्री बेड़े की कमी को पूरा किया। इसमें कोई सन्देह नहीं कि इन कामों को पूरा करने में तुर्कों को मित्रराष्ट्रों मुख्यतया ब्रिटेन से बड़ी सहायता मिली।

उधारपट्टे के समझौते के बाद टर्की की लगभग समस्त युद्धोपयोगी आवश्यकताएँ पूरी हो गई। अतएव इस सत्य को छिपाना कठिन है कि यदि तुर्कों को ब्रिटेन और अमेरिका की सहायता प्राप्त न होती तो उनके लिए अपने देश की रक्षा करना यदि असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य हो जाता। युद्ध-काल में टर्की को अपनी रक्षा के लिए ३ करोड़ रुपया प्रतिदिन व्यय करना पड़ा। टर्की जैसे छोटे देश के लिए यह व्यय सामर्थ्य के बाहर था। परन्तु इस सम्बन्ध में तुर्कों ने त्याग आदि की भावना के वशीभूत होकर साधारण जीवन व्यतीत करना निश्चय किया, और अपनी प्रतिदिन की आवश्यकताओं में बहुत कमी कर दी तथा महँगाई को भी बड़े धैर्य के साथ सहन किया। इस समय तुर्कों को

सबसे अधिक चिन्ता इस बात की थी कि कहीं ऐसा न हो कि उनकी १५ वर्ष की करी-धरी मेहनत पर पानी न फिर जाय। जिस जाति ने रसातल के गर्त में शताब्दियाँ व्यतीत कर दी हों, उसके लिए इस कठिन काल में पिछले १५ वर्षों के कार्यों और आविष्कारों को स्थिर रखना हँसी-खेल नहीं था। फिर भी इस अवधि में, टर्की ने स्वतन्त्र दशा में विदेशी व्यापार को उन्नत बनाने का प्रयत्न किया। इस स्थान पर यह बता देना भी आवश्यक है कि तुर्कों ने सन् १६२४ में नहीं, बल्कि सन् १६२६ में स्वतन्त्र व्यापार आरम्भ किया। इसी काल में उन्होंने एक नया आर्थिक संगठन भी स्थापित किया और पहलेपहल आयात की वस्तुओं पर टैक्स लगाया। शान्ति-काल में व्यापार में उन्नति करना कोई कठिन कार्य नहीं, परन्तु युद्ध-जैसे भीषण काल में यह एक कठिन कार्य है। इसलिए विना किसी हिचकिचाहट के यह कहा जा सकता है कि पिछले चार-पाँच वर्ष में टर्की ने जिस प्रकार उन्नति की है, वह सराहनीय है और आशा की जाती है कि भावी शान्ति-काल में वह नई उन्नति से पूर्ण लाभ उठायेगा। जर्मनी और मध्य-योरप की मंडियाँ हाथ से निकल जाने के बाद इस समय टर्की इस प्रयत्न में लगा हुआ है कि ब्रिटेन और आफ्रिका से व्यापारिक सम्बन्ध बढ़ाकर इस कमी को पूरा किया जाय। परन्तु चीज़ों की महँगी और विनिमय की कठिनता से इस काम में बहुत-सी कठिनाइयाँ

उपस्थित हो रहा है। अतएव आजकल टर्की की सरकार इन कठिनाइयों को दूर करने के लिए भरसक प्रयत्न कर रही है।

जहाँ तक देश के प्रबन्ध का प्रश्न है, टर्की के प्रजातन्त्र राज्य ने आरम्भ के १५ वर्षों में भीतरी कार्यों और देश के प्रबन्ध-कार्यों में बहुत उन्नति कर ली है, परन्तु युद्ध-काल में सैनिक समस्या के सम्मुख इस विषय में और अधिक उन्नति न हो सकी। युद्ध के ६ वर्षों में तुर्कों ने बहुत से नये अनुभव प्राप्त कर लिये हैं। और, आशा की जाती है कि परिस्थिति सुधरने और अवसर मिलने पर वह देश के प्रबन्ध में भी और अधिक उन्नति कर लेंगे।

टर्की ने अपनी एक स्वतन्त्र विदेशी नीति भी निर्धारित कर ली है। तुर्क सदैव से इस बात के माननेवाले थे, परन्तु इससे पहले इस सम्बन्ध में उन्हें कोई विशेष सफलता नहीं मिली थी। टर्की राजनीतिक दिशा में दीर्घकाल से उन्नति की ओर अग्रसर हो रहा है। इस समय उसे बल्कान और मध्य-पूर्व में राजनीतिक दृष्टि से विशेष महत्त्व प्राप्त है और इसकी गणना अन्तरराष्ट्रीय शक्तियों में होने लगी है। विचार किया जाता है कि संसार के युद्धोत्तर निर्माण की समस्याओं को सुलझाने में टर्की का भी मुख्य हाथ होगा। इस प्रकार वह अन्तरराष्ट्रीय कांग्रेस में एक उच्च स्थान प्राप्त करेगा।

टर्की के वर्तमान प्रेसीडेंट अस्मत अनूनू यदि एक ओर अन्तरराष्ट्रीय परिवर्तनों की ओर अपनी सुदूर दृष्टि लगाये रहते हैं तो दूसरी ओर तुर्कों को भी वे सम्मान की दृष्टि से देखते रहते हैं। अस्मत अनूनू और टर्की का प्रजातन्त्र दो भिन्न वस्तुएँ नहीं हैं, बल्कि यदि यह कहा जाय कि वे दोनों एक साथ प्रकट हुईं तो कोई अत्युक्ति न होगी। टर्की के प्रधान मन्त्री सिराजओगुलू समस्त देशी और राजनीतिक कार्यों में अस्मत अनूनू का हाथ बटाते हैं। सिराजओगुलू आरम्भ से ही टर्की की क्रान्ति से सम्बद्ध थे, यहाँ तक कि जब स्मर्ना स्वाधीन हुआ तो सिराजओगुलू ही वे पहले सैनिक सरदार थे जो तुर्क वीरों को साथ लेकर इस नगर में पहुँचे। वे देश की सारी आन्तरिक बातों की देखभाल करते हैं। इनके बाद नोमानमनमंजागुलू का स्थान है। ये राजनीति और राजदूत के कार्यों में दक्ष हैं। इनकी सारी आयु टर्की की विदेशी नीति से सम्बन्धित कार्यों को करने में व्यतीत हुई है। इस समय वे टर्की के वैदेशिक मन्त्री के उच्च पद पर आसीन हैं। इस पद पर उनकी नियुक्ति यह स्पष्ट कर देती है कि टर्की अपनी वैदेशिक नीति में सत्यता और दृढ़ता से काम लेना चाहता है।

पछले महायुद्ध के ६ वर्षों में टर्की को भाँति-भाँति की कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। यह देश चारों ओर से भयग्रस्त था। परन्तु इस देश के मन्त्रियों ने जिस निपुणता

के साथ अपनी नौका को किनारे लगाया. उसे एक अद्भुत घटना कहा जा सकता है। असमत अनूनू और उसके 'सहायकों ने तटस्थता के मार्ग पर दृढ़ता और शान्तिपूर्वक चलकर अपने देश को युद्ध की अग्नि से बाल-बाल बचा लिया। यह एक ऐसा सत्य है कि इस पर केवल तुर्क राजनीतिज्ञ ही नहीं, वरन् सारी तुर्कजाति भी जितना प्रसन्न हो, उतना ही कम है। थोड़े दिनों से तुर्कों की इस प्रसन्नता में कुछ भय भी उत्पन्न हो गया है। इस समय रूस और टर्की के वैदेशिक सम्बन्ध ऐसे दृढ़ और शान्त नहीं हैं कि टर्की रूस की मित्रता पर पूर्ण विश्वास कर सके। इसके अतिरिक्त दर्रे दानियाल जलडमरूमध्य की समस्या भी अभी वैसी ही बनी हुई है। यह बात निश्चयपूर्वक नहीं कही जा सकती कि किस दिन यह समस्या उठ खड़ी हो और केवल इसी कारण रूस और टर्की में युद्ध छिड़ जाय।